भारतीय ग्रन्थमाला—संख्या १३

नागरिक शिक्षा

भगवानदास केला

भारतीय ग्रन्थमाला—संख्या १३

नागरिक शिक्षा

Nagrik Shikhsha

लेखक

भारतीय शासन, हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ, नागरिक शास्त्र
और नागरिक ज्ञान आदि के

रचयिता

भगवानदास केला

Bhagwan Das Kela

प्रकाशक

व्यवस्थापक, भारतीय ग्रन्थमाला, बृन्दावन

तीसरा संस्करण | सन् १९४१ ई० | मूल्य दस आने

1941

निवेदन

हर्ष का विषय है कि इस पुस्तक के तीसरे संस्करण छपने का अवसर आया। मैंने इस बार इसे और भी अधिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया है। पुस्तक का दूसरा पाठ (नागरिक जीवन) और दो परिशिष्ट (मेरा प्यारा गाँव, और नागरिकता की कसौटी) नये बढ़ाये गये हैं। रेल तार और डाक के पाठों में इन विषयों के ऐसे नियम भी दे दिये गये हैं, जिनसे नागरिकों को रोजमर्रा काम पड़ता है। अन्य पाठों में भी आवश्यक संशोधन किया गया है।

पुस्तक का आकार बहुत अधिक न बढ़े, इसके लिए इस संस्करण की कुछ सामग्री छोटे टाइप में देने के अतिरिक्त, पिछले संस्करण के अन्तिम दो पाठ ('ग्राम और नगर प्रबन्ध' तथा 'हमारे देश का राज्य प्रबन्ध') निकाल दिये गये हैं। शासन पद्धति के ज्ञान के लिए पाठक हमारी 'सरल भारतीय शासन' तथा 'भारतीय शासन' के नये संस्करण अवलोकन कर सकते हैं।

यद्यपि यह पुस्तक बहुत सी शिक्षा संस्थाओं तथा स्कूल पुस्तकालयों में स्वीकृत है, तथापि हमारे साधन परिमित होने के कारण इसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो रहा है। वास्तव में, इसके प्रचार के लिए अभी बहुत गुंजायश है। आशा है, नागरिक शिक्षा-प्रेमी महानुभाव इस ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे। श्री० जुगलकिशोर जी एम. ए. भूतपूर्व आचार्य प्रेममहाविद्यालय, वृन्दावन, ने इस पुस्तक की शिक्षा-प्रद भूमिका लिखने की कृपा की है, उसे पाठक विचारपूर्वक अवलोकन करें। मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूँ।

विनीत

भगवानदास केला

अध्यापकों के लिए

अध्यापक इस पुस्तक को यथा-सम्भव मनोरंजक बनावें। उन्हें चाहिए कि वे जिस नागरिक विषय की शिक्षा दें, उसके कुछ स्थानीय दृष्टान्त विद्यार्थियों के सामने रखें, और जब कभी अवसर मिले, राज्य के भिन्न-भिन्न विभागों से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ व्यक्तियों, संस्थाओं, तथा उनके कार्यालय या दफ़्तर आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान कराएँ। जिन बातों को विद्यार्थी अच्छी तरह समझते हों, उनके उस ज्ञान का सदैव उपयोग करके ही, अज्ञात वस्तुओं का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान कराना चाहिए। विद्यार्थियों को समय-समय पर, नक्शे, माडल, मेजिक लालटेन की तस्वीरें, तथा अन्य चित्र दिखाये जाने चाहिएँ। साथ ही उन्हें कभी-कभी, कल-कारख़ानों, नहर या नदी के पुल, रेलवे स्टेशन, अदालतों, पुलिस की चौकी, चुंगी घर आदि की सैर करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए, इससे उनके मन में इन विषयों के ज्ञान के लिए अनुराग बढ़ेगा।

विद्यार्थियों के मन पर यह बात भली भाँति अंकित की जानी चाहिए कि घर में, और बाज़ार में, स्कूल में और खेलने के मैदान में, रेल में और मुसाफ़िर खाने में, सर्वत्र उनके लिए कर्तव्य का क्षेत्र खुला पड़ा है; इस कर्तव्य को पालन करने से ही वे अच्छे नागरिक और सुयोग्य भारत-संतान बन सकते हैं।

अध्यापकों को इन विषयों सम्बन्धी अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए आवश्यक साहित्य देखते रहना चाहिए; उनके लिए इस ग्रन्थ माला की (१) भारतीय शासन (२) निर्वाचन पद्धति (३) भारतीय राजस्व (४) हमारी राष्ट्रीय समस्याएँ (५) भारतीय नागरिक और उनकी उन्नति के उपाय, और (६) अपराध चिकित्सा पुस्तकें विशेष उपयोगी हैं।

स्वर्गीय रायबहादुर पण्डित लक्ष्मीचन्द जी केला
जन्म सन् १८४९ ई०; निधन सन् १९०१ ई०

समर्पण
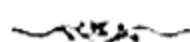
स्व० रायबहादुर पण्डित लक्ष्मीचन्द जी केला,

पूज्य चाचा जी !

एक गाँव (बाबैल, तहसील पानीपत) में जन्म लेकर भी आपने हिन्दी, संस्कृत के अतिरिक्त, अंगरेज़ी पढ़ने में जो अदम्य उत्साह दर्शाया, और अनेक कठिनाइयों का सामना किया, वह नवयुवकों--भावी नागरिकों--के लिए अत्यन्त शिक्षाप्रद है।

बहुत जल्दी ही सबडिविज़नल अफ़सर बनकर, आप अपनी प्रखर योग्यता, परिश्रम और ईमानदारी के कारण, पंजाब सरकार से पहले 'पंडित' और फिर 'रायबहादुरी' के पद से सम्मानित हुए। पीछे लायलपुर के जंगलों को उत्तम 'कालोनी' (उपनिवेश) बनाने में कार्यपटुता दर्शाकर आपने बहुमूल्य 'सरोपा' पारितोषिक प्राप्त किया। आपका स्वर्गवास हो जाने पर आपके परिवार को सरकार से लगभग पाँच हज़ार रुपए वार्षिक आय की भूमि मिली। यह बातें वास्तव में सत्पुरुषों की ईर्षा के योग्य और सिद्धान्त-हीन हाँ-हजूरों के लिए उपदेश-प्रद हैं।

एक उच्च पदाधिकारी होकर भी आपने जैसी आदर्श सादगी सरलता, दीनबंधुता, उदारता, लोक सेवा आदि सद्‌गुणों का परिचय दिया, वह प्रत्येक नागरिक के लिए अनुकरणीय है। यह तुच्छ भेंट आपकी पुण्य-स्मृति के लिए उपस्थित है। परमात्मा करे, इस देश का प्रत्येक निवासी आपकी भाँति अपने विविध कर्तव्यों का समुचित रूप से पालन करे, और, सुयोग्य नागरिक बने।

विनीत

भगवानदास केला

प्रस्तावना

श्री० भगवानदास जी केला ने हिन्दी में राजनैतिक साहित्य रचना का बहुत कार्य किया है। उनकी रचनाओं से हिन्दी-भाषा-भाषी जनता अच्छी तरह परिचित हो चुकी है। जिन विद्यार्थियों ने नागरिक शास्त्र तथा भारतीय शासन पद्धति का विषय लिया है, उनके लिए ये रचनाएँ अत्यन्त उपयोगी रही हैं। अध्यापकों ने भी इन पुस्तकों के लेखक के परिश्रम और योग्यता की सराहना की है। नागरिक विषय सम्बन्धी उनकी यह पुस्तक राजनैतिक साहित्य में और भी वृद्धि करती है; यह विशेषतया इस विषय को आरम्भ करनेवालों के लिए लिखी गयी है।

अब तक नवयुवकों की शिक्षा में नागरिक शिक्षा को कुछ महत्व नहीं दिया गया। इस समय भी, इस ओर जो ध्यान दिया जाने लगा है, उसकी गति बहुत ही मन्द है। इस लिए अधिक पुस्तकें प्रकाशित नहीं हुई। सार्वजनिक सेवा के भाव से जिन थोड़ेसे लेखकों ने इस विषय पर लिखने का साहस किया है, उन्हें शिक्षा विभागों के अधिकारियों द्वारा समुचित प्रोत्साहन नहीं मिला। राजप्रबन्ध सम्बन्धी सिद्धान्त और कार्य नवयुवकों के लिए रहस्यमय रहे हैं। उत्तम नागरिकता के भावों से, नवयुवकों के वंचित रहने का परिणाम यह हुआ है कि उनमें सामाजिक चेतनता विकसित नहीं हो पायी, और

उन्होंने समाज के प्रति अपने कर्तव्य-पालन में अवहेलना की। नागरिक विषय का अध्ययन नवयुवक के भावी हित के लिए, केवल उस अवस्था में ही आवश्यक नहीं है, जब उस पर परिवार और नगर का उत्तरदायित्व आता है, वरन् इससे उसे अपने विद्यालय के प्रबन्ध तथा उसकी कठिनाइयों का ज्ञान होने में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है। इससे उसे यह विचार होता है कि उसका अपने विद्यालय, तथा अपनी कक्षा के प्रति क्या-क्या कर्तव्य है, और वह अपनी कक्षा के अनुशासन और नियंत्रण रखने में भी सहायक हो जाता है।

बहुतसे नवयुवक ऐसे हैं, जिन्हें, बी. ए., और एम. ए. की उपाधि धारण करने पर भी, म्युनिसपैलटियों के संगठन और उनके कार्यों तक का भी ज्ञान नहीं होता। उनका अज्ञान और उदासीनता इस शिक्षा पद्धति का प्रत्यक्ष फल है, जिसमें उन्हें न केवल इस विषय के ज्ञान का अवसर नहीं दिया गया, वरन् नवयुवकों के नागरिकता के भावों की वृद्धि करने का प्रत्येक प्रयत्न रोका गया है। राष्ट्रीय और नागरिक विषयों में नवयुवकों की उदासीनता आश्चर्यजनक और दुखदायी है। इसका उपाय यही है कि नागरिक विषय का अध्ययन अनिवार्य कर दिया जाय, तथा व्यक्ति और समाज की अन्योन्य आश्रयिता की ओर भली भांति ध्यान दिलाया जाय। समाज की उन्नति व्यक्तियों के बुद्धिमत्तापूर्वक किये हुए प्रयत्नों तथा स्वार्थ-त्यागों पर निर्भर है, और व्यक्ति की उन्नति तभी होती है जबकि समाज अच्छी, विकार-हीन स्थिति में हो। यदि शिक्षा मनुष्य को ऐसा उपयोगी नागरिक बनाने में विफल होती है कि वह अपने व्यक्ति-

गत हित को नगर और देश के बड़े हित के सन्मुख गौण समझे, तो यही नहीं, कि उस शिक्षा का उद्देश्य नष्ट हो जाता है, वरन् वह, शिक्षा के अभाव से भी, अधिक भयंकर सिद्ध होती है। अध्यापक का उत्तरदायित्व महान है। यह उसका काम है कि वह अपने शिष्यों के लिए इस विषय को मनोरंजक बनाये। विद्यार्थियों को नागरिकता का विचार, कर्तव्यों और अधिकारों का सूक्ष्म सिद्धान्तों के वर्णन मात्र से नहीं दिया जा सकता; इसके लिए परिवार और विद्यालय के जीवन के स्थूल उदाहरणों की आवश्यकता है। परिवार और विद्यालय के जीवन में नगर और राज्य के जीवन सम्बन्धी बहुतसे अच्छे दृष्टान्त मिलते हैं, और उनके, उदाहरणों से विद्यार्थी नगर और राज्य के जीवन की वास्तविकता अच्छी तरह समझ सकते हैं। नागरिकता के उत्तरदायित्व को अच्छी तरह समझलेने से विद्यार्थियों के नैतिक भावों की वृद्धि होती है, और इससे वे विद्यालय के सामुहिक कार्यों में अधिक दिलचस्पी से भाग ले सकते हैं।

इस प्रकार नागरिक विषय के अध्ययन से व्यक्तियों की सामाजिक और नैतिक चेतनता का विकास होता है, और यही सब शिक्षा का वास्तविक उद्येश्य है। इस पुस्तक में इस विषय का ऐसी उत्तमता से वर्णन किया गया है कि यह औसत दर्जे के विद्यालयों के विद्यार्थियों की समझ में आसानी से आजाय। अतः इसका लेखक विशेषतया अध्यापकों के धन्यवाद का अधिकारी है, जिनका शिक्षा-कार्य उसने सुगम कर दिया है।

अन्त में मैं यह आशा करता हूँ कि जिस शैली से नागरिक विषय का वर्णन इस पुस्तक में हुआ है, उससे नवयुवकों को इस बात में सहायता मिलेगी कि वे विद्यालय और परिवार के प्रति अपना वर्तमान उत्तरदायित्व समझें, तथा, जब वे राज्य के बड़े क्षेत्र में प्रवेश करें तो वे अपने उच्च नागरिक उत्तरदायित्व को सम्मान-पूर्वक पूरा करें।

प्रेम महाविद्यालय,
वृन्दावन

जुगल किशोर,
एम. ए.

विषय-सूची

नागरिक शिक्षा

पहला पाठ

विषय-प्रवेश

मनुष्य आपस में मिलकर रहते हैं--पाठको ! तुममें से कोई अकेला नहीं रहता, तुम सब अपने-अपने घर में अपने माता-पिता आदि के पास, किसी गांव या नगर में रहते हो। अगर तुममें से कोई अकेला रहने लगे तो पहले तो उसका जी ही नहीं लगेगा, सुनसान जगह में भय सा मालूम होगा; फिर वहां उसका निर्वाह भी तो नहीं हो सकता। उसे खाने, पहनने के लिए भोजन-वस्त्र चाहिए; सर्दी, गर्मी, और बरसात से बचने के लिए मकान चाहिए। कोई आदमी इन भिन्न-भिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को अकेला ही पूरा नहीं कर सकता। इन्हें पूरा करने के लिए, हर एक आदमी को दूसरों की सहायता की ज़रूरत होती है। यही कारण है कि प्रायः मनुष्य अकेला नहीं रहता। हर एक व्यक्ति दूसरों से मिलकर रहना चाहता है।

समाज में मिलकर रहने से मनुष्यों को एक-दूसरे के विचार मालूम होते हैं। इससे उन्हें अपनी उन्नति करने में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त, उनमें सेवा, प्रेम और सहानुभूति आदि सद्गुणों की वृद्धि होती है। बड़े (बुजुर्ग) छोटों के हित के लिए नाना प्रकार के काम करते हैं, और कष्ट उठाते हैं। छोटे, बड़ों की आज्ञा में रहते हैं। सब एक-दूसरे के दुख-सुख में साथ देते हैं। इसलिए हम सब मिलकर समाज में रहते हैं।

हम सब एक समाज के अंग हैं—हमें यह बात भली भाँति समझ लेनी चाहिए कि हम सब एक समाज के अंग हैं, समाज हम-से बना है; और हमारा परस्पर में इस प्रकार सम्बन्ध है कि एक को कष्ट पहुँचाने से दूसरों को भी कष्ट पहुँचता है और एक के अवनत होने की दशा में दूसरों की यथेष्ट उन्नति नहीं हो सकती। वास्तव में समाज को मनुष्य के शरीर से उपमा दी जा सकती है। जिस प्रकार हाथ, पाँव, नाक, कान आदि एक ही मनुष्य-शरीर के भिन्न-भिन्न अंग हैं, उसी प्रकार प्रत्येक आदमी, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या वृद्ध, सब अपने-अपने समाज के अंग हैं; चाहे वे भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करते हों, भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा पाये हुए हों, और चाहे वे भिन्न-भिन्न धर्मों को माननेवाले ही क्यों न हों। जिस प्रकार पाँव की एक अंगुली में काँटा लग जाने से समस्त शरीर के भिन्न-भिन्न अंग उसकी पीड़ा का अनुभव करते हैं, और यथा-शक्ति उस पीड़ा को निवारण करने में सहायक होते हैं, उसी प्रकार समाज के पीड़ित होने की अवस्था में अन्य

मनुष्यों को उस कष्ट का अनुभव करके उसे दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

हम देखते हैं कि मनुष्य के भोजन करने से उसके सभी अंगों की पुष्टि होती है। ऐसी दशा में यदि हाथ, पाँव और मुंह यह सोचें कि इस कार्य से तो अकेले उदर की पूर्ति होती है, हम इसके लिए परिश्रम क्यों करें, एवं, यदि यह सोचकर वे परस्पर में सहयोग करना छोड़ दें तो इससे सबकी ही हानि होगी। ठीक इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य की उन्नति से समाज की उन्नति में सहायता मिलती है; समाज के भिन्न-भिन्न अंगों का, अपने पृथक् पृथक् स्वार्थ का विचार करना अनुचित है।

सामज के हित में हमारा हित है—पाठको! तनिक विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जायगी कि यदि हम अपना कल्याण चाहते हैं तो हमें समाज के अन्य अंगों के हित का समुचित ध्यान रखना चाहिए। तुम जानते होगे कि जब हमारे पास पड़ोस के किसी स्थान में प्लेग आदि बीमारी फैल जाती है तो उसका हमारे यहां आना कितना सहज है। यदि हम चाहते हैं कि हम स्वस्थ रहें तो केवल यही काफी नहीं है कि हम अपने घर को साफ सुन्दर रखें; यह भी आवश्यक है कि हम अपने ग्राम और नगर-निवासियों में स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का प्रचार करें।

इसी प्रकार यदि हमारे चारों ओर अशिक्षित, मूर्ख, दुराचारी, गाली-गलौच बकनेवाले या दिन भर लड़ाई-झगड़ा करनेवाले आदमी रहते हैं, तो उनका प्रभाव हमारे मन पर, विशेषतया छोटी

आयु के बालक-बालिकाओं के कोमल हृदयों पर, पड़े बिना न रहेगा। इसलिए हमें अपने पासवालों की उन्नति का ध्यान रखना चाहिए। उनकी बेहतरी में हमारी भी बेहतरी है। उनके नरक कुंड में पड़े रहने की दशा में, हम स्वर्गीय सुख का आनन्द कदापि नहीं ले सकते। अतः अपने ग्राम, नगर और देश की भलाई करना प्रत्येक आदमी का आवश्यक कर्तव्य है।

समाज के कार्य में प्रत्येक मनुष्य को सहायक होना चाहिए—बहुतसे आदमी सोचते हैं कि हम तो ग़रीब हैं, या असमर्थ हैं; हम दूसरों की भलाई क्या कर सकते हैं। हमें अपना ही निर्वाह करना कठिन है, फिर हम परोपकार की बात क्या सोचें। पाठको! यह कथन सर्वथा अनुचित और असत्य है। प्रत्येक मनुष्य चाहे वह जिस अवस्था में हो, यदि चाहे तो, दूसरों की थोड़ी-बहुत भलाई अवश्य कर सकता है। कल्पना करो कि कोई आदमी किसी रोग में व्याकुल है, वह बहुत घबरा रहा है। उसे एक आदमी दवाई के लिए पैसे दे देता है, दूसरा उसके लिए उन पैसों की दवाई ला देता है, तीसरा उसके पास बैठा हुआ उसे धीरज देता है। इन सब सज्जनों के सहयोग से उसे आराम हो जाता है। इस दशा में यह स्पष्ट है कि पैसेवाला पैसे से जो सहायता कर सकता है, उसकी अपेक्षा वह सहायता किसी प्रकार कम मूल्य की नहीं है, जो दूसरा आदमी अपने शरीर से सेवा करके, या वाणी से अच्छी बातें कहकर या हृदय की अच्छी भावनाओं द्वारा कर सकता है। अस्तु, तन से, मन से, या धन से जैसा अवसर हो, जैसी स्थिति हो, हमें समाज के हित-साधन से पीछे न हटना चाहिए।

दूसरा पाठ

नागरिक जीवन

एक विचारणीय घटना—एक साधारण घटना है, पर है कितनी विचारणीय ! वृन्दावन से स्वयंसेवकों की एक टोली प्रस्थान कर रही थी, उसमें पैंतीस, चालीस सज्जन थे, कुछ साधारण शिक्षित और कुछ उच्च शिक्षा से भी विभूषित। सभी में विचार और विवेक था, भले बुरे का ज्ञान था, देश-सेवा की विलक्षण उमंग थी, उत्साह उनके चेहरे से टपका पड़ता था। वे नगर से विदा हो रहे थे। क्यों ? देश के लिए कष्ट सहने के वास्ते उन्होंने कमर कसी थी, मातृ-भूमि का झण्डा ऊँचा करने के खातिर वे यातनाओं को निमन्त्रण दे चुके थे। वे भिन्न-भिन्न स्थानों से आकर यहां एकत्र हुए थे। कुछ गांववाले थे, और कुछ कस्बों तथा शहर के भी। वे निर्धारित दिन प्रातःकाल प्रस्थान करने लगे। नगर-निवासी बाल-वृद्ध उनके दर्शन के लिए बड़े सवेरे से जाग उठे थे, जगह-जगह उनके स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध था, फूल-मालाओं और शर्बत के कुल्हड़ ग्रहण करने के लिए उनसे थोड़ी-थोड़ी दूर पर आग्रह किया जा रहा था। स्वयसेवक फूल-मालाएं अपने गले में धारण करते थे, और शर्बत पी लेते थे। कुल्हड़ों का वे क्या करें, उन्हें वे फेंकते ही। पर इस फेंकने ने बतला दिया कि ये स्वयंसेवक

चाहे जितने गुणों से सम्पन्न हों—और उनके त्याग, साहस और कष्ट-सहिष्णुता की प्रशंसा कौन न करेगा—अभी तक नागरिक-शिक्षा प्राप्त नहीं है। कुछ ने तो इन कुल्हड़ों को उसी स्थान पर डाल दिया जहां वे खड़े थे, और कुछ ने अपनी पंक्ति से तनिक बचा कर—परन्तु सड़क पर ही—डाल दिया, जहां से उनके टुकड़े दूसरों के पांव में चुभ सकते थे।

यह कार्य नागरिकता के विरुद्ध है। पर इसके प्रतिकूल आवाज कौन उठाये! हम सभी तो ऐसे कार्य करने के आदी हो गये हैं। फिर, उस समय इस नागरिक-नियम-भंग के अपराधी वे व्यक्ति थे, जो राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए, उसकी मान-रक्षा के लिए, मानों बलिदान होने के लिए जा रहे थे। अन्य नागरिकों की दृष्टि में वे आदरास्पद होने ही चाहिएँ थे। पर वे भूल गये कि अपने प्रेम-भाजन की त्रुटि भी आखिर त्रुटि ही है और उसका निवारण किया जाना आवश्यक है। संतोष का विषय यही था कि अन्ततः नायक का ध्यान उस ओर चला गया और उसने स्वयंसेवकों के इस कृत्य को चिन्तनीय कहा। फिर तो दूसरे नागरिकों ने भी इसके वास्ते उचित व्यवस्था कर दी।

नागरिक जीवन की अन्य बातें—ऊपर सड़क के दुरुपयोग का एक उदाहरण दिया गया है, पर इसके तो अनेक उदाहरण प्रति दिन हमारे सामने आते हैं। हम बाज़ार में संतरे, केले, मूंगफली आदि खाते हैं, तो छिलके चाहे जहां डालते रहते हैं। चलते हुए हम जहां इच्छा होती है, थूकते रहते हैं। मकान में ऊपर की मंज़िल में रहते हैं, तो जब चाहा सड़क पर मैला पानी,

या कूड़ा-कचरा डाल देते हैं। भारत जैसे निर्धन देश में जहां अधिकांश आदमियों के पांवों में जूतियां नहीं होतीं, इन बातों की ओर ध्यान देने की और भी अधिक आवश्यकता होती है। केले के छिलकों पर तो जूते पहिने आदमियों के पांव फिसलने से कई बार बड़ी दुर्घटनाएँ हो चुकी हैं। पर हम इनसे शिक्षा कब लेते हैं? क्या कभी हम यह सोचने का कष्ट उठाते हैं, कि यदि हम पांव फिसलने से गिर जाय, अथवा नंगे पांव होने की दशा में हमारे पांव में कंकर चुभ जाय, या वह थूक में भर जाय या हमारे शरीर पर मैले पानी के छींटें पड़ जायँ तो हमें कैसा लगेगा? जो बातें हमें बुरी लगती हैं वह हम दूसरों के लिए क्यों करते हैं? क्या दूसरों को वे बातें अच्छी लग सकती हैं? कदापि नहीं। यह तो हम भली भांति जानते हैं, पर जानते हुए भी अपने व्यवहार में इसे भूल जाते हैं।

इस पाठ में हम थोड़ीसी उन बातों की चर्चा करेंगे, जिनका सम्बन्ध हमारे रोजमर्रा के जीवन से है। ये बहुत मामूली सी मालूम होने पर भी इतने महत्व की हैं, कि यदि नागरिक इन पर समुचित ध्यान दें, और तदनुसार व्यवहार करें तो हमारा नागरिक जीवन कहीं अधिक सुन्दर और सुखमय हो जाय।

नागरिकता का मूल-मंत्र—नागरिक जीवन-सम्बन्धी ध्यान रखने योग्य मूल बात यह है कि हम प्रत्येक बात-व्यवहार में अपनी दृष्टि केवल अपने स्वार्थ या सुविधा की ओर न रखें, वरन् दूसरों के हित की भी ओर रखें। हमारा कोई कार्य ऐसा न

हो, जिससे दूसरों को हानि या कष्ट पहुँचे; हम दूसरों से ऐसा बर्ताव करें, जैसा हम चाहते हैं कि दूसरे हम से करें।

पिछले पाठ में यह बताया जा चुका है कि किसी मनुष्य का जीवन, समाज के अन्य व्यक्तियों के जीवन से सर्वथा पृथक और स्वतंत्र नहीं है। प्रत्येक मनुष्य अन्य अनेक मनुष्यों से, अपने परिवार-वालों से, अपने ग्राम और नगरवालों से, अपने प्रान्त या राज्यवालों से तथा अपने राज्य के बाहर के भी बहुत से आदमियों से सम्बन्धित होता है। एक के सुख-दुख का, रोग, शोक, और हानि-लाभ का परिणाम उसी व्यक्ति तक परिमित नहीं रहता, वरन् दूसरे भी बहुत-से आदमियों को भोगना पड़ता है। प्रत्येक समाज के मनुष्य मानों एक शृङ्खला में बंधे हुए हैं; एक कड़ी के खराब हो जाने पर वह सारी ज़ंजीर कमजोर हो जायगी, जिसका एक अंग स्वयं हम ही हैं। अपने पड़ोसियों के बीमार रहते हुए स्वयं रोग के कीटाणुओं से सुरक्षित रहने की कल्पना करना मूर्खता और शेखचिल्लीपन ही है।

नागरिकता का व्यवहार—इन बातों में कुछ नवीनता नहीं है। समय-समय पर अनेक विद्वानों और आचार्यों ने कही हैं। हम पुस्तकों में पढ़ते हैं; व्याख्यानों में सुनते हैं; और समाचारपत्रों द्वारा भी इनका ज्ञान प्राप्त करते हैं। परन्तु खेद का विषय तो यही है इतना होते हुए भी बहुत कम आदमी इनके अनुसार व्यवहार करते पाये जाते हैं। अनेक बार शिक्षित और समझदार व्यक्ति भी इस विषय में दोषी मिलते हैं। हां, यह बात अवश्य है कि क्योंकि अधिकांश आदमी नागरिकता के नियमों की अवहेलना करते हैं, तो कोई किसी

को टोकने या उसकी आलोचना करने का साहस नहीं करता, जब तक उसका दोष यहां तक न बढ़ जाय कि वह क़ानून की पकड़ में आता हो। अर्थात् हम स्वेच्छापूर्वक नागरिक नियमों का पालन बहुत कम करते हैं।

बस्ती अर्थात् नगर या गाँव में—ये बातें कुछ उदाहरणों द्वारा ध्यान में आ जायँगी। गांवों की तो बात ही क्या, नगरों का विचार कीजिए, जहां आदमियों से, अधिक शिक्षित होने के कारण, अधिक समझदारी की आशा की जाती है। म्युनिसपैलटी या सफ़ाई-कमेटी इस बात का प्रबन्ध करती है कि नालियां तथा सड़कें साफ रहें और नगर का स्वास्थ्य अच्छा रहे। परन्तु जब तक इसमें नागरिकों का यथेष्ट सहयोग न हो किसी प्रकार का पंचायती प्रबन्ध कैसे सफल हो सकता है! कल्पना करो कि सवेरे छः बजे तक नालियां और सड़कें साफ हो गयीं परन्तु घर और दूकानवाले जब चाहा कूड़ा फेंकते रहे तो सफ़ाई कैसे रह सकती है! नागरिकों को चाहिए कि मेहतर के आने से पहले ही अपने घर या दुकान आदि का कूड़ा इकट्ठा करके एक बार बाहर डाल दें। मेहतर के साफ करके चले जाने के बाद फिर जो कूड़ा हो, उसे बारबार सड़क पर न फेंक कर घर में ही एक टोकरी या कनस्तर में जमा करते रहें, और मेहतर के आने के समय ही उसे बाहर डालें।

कितनी ही औरतें दूसरों की आंख बचाकर अपने बच्चों को नालियों में टट्टी बैठा देती हैं, जिससे उन्हें बच्चों की टट्टी साफ करने की जरूरत न पड़े। इन पंक्तियों के लेखक ने कई बार बड़े-बड़े शहरों की नालियों

को बड़ी उम्र के आदमियों के मैले से सनी हुई देखा है। हम बड़े शहरों में रहते हैं तो क्या हुआ, हमारा व्यवहार तो क्षुद्र ही है। वृन्दावन से ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए म्युनिसपल बोर्ड के चेअरमेन तथा सेनिटरी इन्सपेक्टर ने प्रातःकाल अंधेरे ही उठ कर कुछ दिन लगातार भिन्न-भिन्न मोहल्लों में गश्त लगाया था। जब तक लोगों में नागरिकता का यथेष्ट ज्ञान न हो, सभी नगरों के अधिकारियों को सतर्क रह कर समुचित देख-रेख और व्यवस्था करनी चाहिए।

यात्रा के अवसर पर, रेल में तथा धर्मशाला आदि में—यह तो अपनी बस्ती की बात हुई, जहां हमारे जान पहचान के ऐसे आदमी होते हैं, जिनका हमें कुछ लिहाज रखना पड़ता है। अपनी बस्ती से बाहर निकलने पर जब यह बन्धन नहीं रहता, वहां ही वास्तव में इस बात की अच्छी परीक्षा होती है कि हम में नागरिकता की भावना कितनी जाग्रत हो पायी है। रेल के डिब्बे में रोजमर्रा का अनुभव क्या बतलाता है? कितने ही आदमी खाना खाकर जूठन तथा पत्ते या कागज अपनी सीट के नीचे ही डाल देते हैं। मूंगफली या संतरे खानेवाले छिलके बाहर नहीं फैंकते। गन्ना चूसनेवाले भी उसके छिलके बाहर फेंकने का कष्ट नहीं उठाते। तमाखू पीने या खानेवाले अपनी सीट के पास ही थूकते हुए नहीं लजाते। कहां तक गिनावें! कभी-कभी तो इन लोगों की ऐसी आदतों के कारण किसी भले आदमी के लिए गाड़ी में बैठना कठिन हो जाता है। पर वे तनिक नहीं सोचते कि उनके व्यवहार से, उनकी थोड़ीसी आरामतलबी से, दूसरे आदमियों को कितनी असुविधा होती है। वे अपनी यात्रा पूरी

करके उतर जाते हैं, दूसरों के दुःख से उन्हें क्या प्रयोजन !

मुसाफिरखानों और धर्मशालाओं में जगह-जगह व्यावहारिक नागरिकता में हमारे विफल होने के उदाहरण मिलते हैं। इन स्थानों में प्रायः सबेरे और तीसरे पहर, दो बार सफाई होती है, और इन्हें गन्दा करने का क्रम तो दिन भर, और हां, प्रायः रात को भी चलता रहता है। जो यात्री दोपहर को या रात में इन स्थानों में ठहरते हैं, उन्हें बहुधा परेशान होना पड़ता है; सिवाय उन थोड़े से स्थानों के जहां हर घड़ी सफाई करने के लिए खास तौर से आदमी मुकर्रर रहता है।

बाज़ार के काम में—हमारी नागरिकता की भावना के अभाव ने बाज़ार से चीज़ मोल लाने या बेचने को एक बड़ी 'कलः' बना रखा है। चीज बेचनेवाला चाहता है कि उसकी वस्तु घटिया होने पर भी ग्राहकों को अच्छी दिखायी दे, वह उनकी आंखों में धूल झोंकने के सब प्रकार के प्रयत्न करता है और अधिक-से-अधिक दाम लेने की चिन्ता रखता है। जितना वह ग्राहकों को अधिक ठग सकता है उतना ही वह अपने आपको अधिक कुशल समझता है। कभी-कभी ग्राहक भी अपना खोटा सिक्का दुकानदार के गले मढ आता है, अथवा दुकानदार को धोखा देकर कुछ कम पैसे दे आने में सफल हो जाता है। सार बात यह है कि न ग्राहक को यह विश्वास होता है कि उसे अच्छी चीज़ मिलेगी या उचित दामों में मिलेगी, और न दुकानदार को यह भरोसा रहता है कि जब तक वह पूर्ण सावधान न रहे, उसे अच्छा सिक्का मिलेगा, और वह ठीक संख्या में होगा। दोनों के दिल

में अविश्वास और आशंका होती है।

नागरिकता की शिक्षा—ऐसे नागरिक जीवन से सभी को कष्ट होता है। क्या हम इसके सुधार का भरसक यत्न करेंगे? अच्छा सुधार का उपाय क्या? इस विषय में एक मुख्य बात यह है कि विद्यार्थियों की शिक्षा में नागरिक शिक्षा का समावेश अवश्य होना चाहिए। जिस शिक्षा में नागरिकता की शिक्षा को यथेष्ट स्थान प्राप्त नहीं है, वह शिक्षा अपर्याप्त या अधूरी है। स्मरण रहे कि नागरिकता एक व्यावहारिक विषय है। विद्यार्थियों को इसकी केवल मौखिक या किताबी शिक्षा ही नहीं मिलनी चाहिए। उनके सामने तो इसके क्रियात्मक दृष्टान्त और उदाहरणों के नमूने रखे जाने चाहिएँ।

यह काम विशेषतया माता पिता और अध्यापकों का है। उन्हें चाहिए कि अपनी बोलचाल और व्यवहार से, अपने प्रत्येक कार्य से नागरिकता की शिक्षा दें। खासकर छोटे बालकों में अनुकरण की प्रवृत्ति बहुत होती है, वे अपने माता पिता और अध्यापकों की बातों की अपेक्षा उनकी कृति से बहुत प्रभावित होते हैं। आशा है, अपनी संतान का हित चाहनेवाले माता-पिता तथा अपने विद्यार्थियों की उन्नति के अभिलाषी अध्यापक इस ओर समुचित ध्यान देंगे।

तीसरा पाठ

राज्य और नागरिक

पाठको! परिवार की बात तुम जानते हो। पिता परिवार का पालन पोषण करने के लिए आवश्यक वस्तुएँ लाता है, माता घर का प्रबन्ध करती है। बड़े लड़के लड़कियां उन्हें उनके कार्य में यथा-शक्ति सहायता देती हैं, छोटे बच्चों की समुचित देख-रेख की जाती है। सब के कर्तव्य-पालन तथा सहयोग से परिवार की सुख-समृद्धि बढ़ती है। जिस परिवार के आदमी आपस में लड़ते झगड़ते हैं, अपना कर्तव्य पालन नहीं करते, वह परिवार बहुत दुखी रहता है, और पड़ोस में उसकी बड़ी निन्दा होती है। इसलिए परिवार के सब आदमियों को परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

इसी तरह तुम जानते हो कि क्रिकेट या फुटबाल के खेल में एक कप्तान (कैप्टेन) होता है। उसे, खेलनेवाले इसलिए चुनते और कुछ अधिकार सौंपते हैं कि वह खेल का ठीक-ठीक प्रबन्ध करे, और किसी को नियम-विरुद्ध कार्य न करने दे।

जिस प्रकार परिवार में परिवार के, और खेल में खेल के, नियम पालन करने की आवश्यकता है, उसी प्रकार ग्राम या नगर, तहसील, ताल्लुका, ज़िला या प्रान्त में इन-इन स्थानों के नियम पालन किये

जाने चाहिएँ; तभी देश में सुख, शान्ति और उन्नति हो सकती है। परन्तु बहुधा आदमी इस बात को भूल जाते हैं।

सरकार की आवश्यकता—जिस प्रकार माता पिता की अनुपस्थिति में छोटे बालकों का, और कप्तान की अनुपस्थिति में खेलनेवालों का कभी-कभी झगड़ा हो जाता है, उसी प्रकार गांव या नगर आदि में जब तक कोई नियम पालन करानेवाला न हो, कुछ आदमी नियम भंग करने को तत्पर हो जाते हैं। यद्यपि अधिकतर मनुष्य शान्ति-प्रिय होते हैं, और अपनी इच्छा से ही सब काम नियमपूर्वक करते हैं, तथापि कुछ आदमियों का ऐसा स्वभाव होता है कि जबतक उन्हें किसी का डर न हो, वे चोरी या लूट-मार करेंगे या अन्य प्रकार से दूसरों को कष्ट देंगे। इस से बड़ी अशान्ति तथा हानि होती हैं। इसलिए देश में कुछ ऐसे आदमियों के एक समूह या संस्था की बड़ी आवश्यकता होती है, जो सब से नियम पालन कराये और शान्ति रखे। ऐसी संस्था की ज़रूरत इसलिए भी होती है कि जिन कामों को आदमी अलग अलग न कर सकें, उन्हें वह सब की ओर से करती रहे, वह सब की उन्नति में सहायक हो। इस संस्था को 'सरकार' या 'गवर्नमेन्ट' कहते हैं।

साधारण बोलचाल में जिसे कुछ अधिकार या शक्ति हो, उसे ही सरकार कह देते हैं। बहुतसे नौकर अपने मालिक को सरकार कहा करते हैं। परन्तु वास्तव में सरकार उन आदमियों का समूह है, जो देश या उस के किसी भाग में सुख शान्ति का प्रबन्ध करे और उस की, बाहर के शत्रुओं से, रक्षा करे।

भारतवर्ष की सरकार को 'भारत-सरकार' कहते हैं, और, इस देश के एक-एक प्रान्त की सरकार वहां की प्रान्तीय सरकार कहलाती है। इनके विषय में विशेष बातें तुम हमारी दूसरी पुस्तक 'भारतीय शासन' में पढ़ोगे। यहां, यह बताया जाता है कि सरकार किस किस प्रकार के कार्य किया करती है।

सरकार के कार्य—कुछ कार्य तो ऐसे होते हैं, जो प्रत्येक देश की सरकार को करने होते हैं। यदि ये कार्य न किये जायँ तो आदमी अपना रोज़मर्रा का साधारण कार्य-व्यवहार न चला सकें, उनका जीवन संकटमय हो जाय। ऐसे कार्यों को हम सरकार के 'शान्ति स्थापक' कार्य कह सकते हैं। ये कार्य निम्नलिखित हैं:—

(१) सरकार देश की बाहर के शत्रुओं से रक्षा करती है। विदेशियों के आक्रमण रोकने के लिए स्थल सेना, जल सेना, तथा वायु सेना रखी जाती है।

(२) सरकार देश के भीतर शान्ति रखती है, चोर, डाकू आदि से लोगों के जान-माल की रक्षा करती है। इस कार्य के लिए पुलिस रखी जाती है।

(३) पुलिस जिन लोगों को अपराधी समझकर गिरफ़ार करे, अथवा जिनके विरुद्ध कोई अभियोग हो, उनके विषय में सरकार यह निश्चय करती है कि वे वास्तव में अपराधी हैं या नहीं; यदि वे अपराधी हैं तो उनसे कैसा वर्ताव किया जाना चाहिए, या उन्हें क्या दंड दिया जाना चाहिए। यह कार्य न्यायालय करते हैं। बहुत से अपराधियों को, दंड देने के लिए क़ैद किया जाता है। इसके वास्ते

जेलों का प्रबन्ध होता है।

ये तो हुए, सरकार के शान्ति-स्थापक कार्य। इनके अतिरिक्त कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जो लोगों के लिए उपयोगी तो होते हैं, परन्तु ऐसे नहीं होते कि उनके न किये जाने से लोगों का रोज़मर्रा का काम ही न चले, या उनकी जान जोखम में रहे। फिर, जिन देशों के आदमी उन्नत अवस्था में होते हैं, उनमें उन कार्यों को वे स्वयं कर लेते हैं; सरकार को उनके करने की ज़रूरत नहीं होती। ऐसे कार्यों को हम सरकार के 'लोक हितकर' कार्य कह सकते हैं। उदाहरणार्थ लोगों के पत्र-व्यवहार और आमदरफ़्त के लिए डाक, तार और रेल आदि का प्रबन्ध करना, शिक्षा के लिए विद्यालय और महाविद्यालय चलाना, व्यापार के वास्ते बैंक खोलना, सड़कें बनाना, तथा रेल, ट्रामवे और मोटर आदि का प्रबन्ध करना; खेती के लिए नहरें और तालाब आदि बनवाना, स्वास्थ्य-रक्षा के लिए नगरों और ग्रामों में सफ़ाई का इन्तज़ाम करना, तथा जगह-जगह अस्पताल और शफ़ाखाने खोलना आदि।

सरकार के इन शान्ति-स्थापक तथा लोक-हितकर कार्यों का सविस्तर वर्णन आगे किया जायगा। यहां हमें एक और बात का विचार करना है।

राज्य किसे कहते हैं?—जब किसी देश में सरकार अपना कार्य करने लग जाय और वह किसी अन्य सरकार के अधीन न हो, तो वह देश 'राज्य' या 'स्टेट' कहा जाता है। किसी देश का क्षेत्र-फल और जन-संख्या कुछ ही क्यों न हो, राज्य होने के लिए वहां

एक स्वतंत्र सरकार का रहना अत्यन्त आवश्यक है। उदाहरण के लिए, यद्यपि भारतवर्ष एक बड़ा देश है, और यहां चालीस करोड़ आदमी रहते हैं, इसे अभी वास्तव में 'राज्य' नहीं कह सकते; क्योंकि यहां की सरकार अभी बहुत सी बातों में स्वतंत्र नहीं, उसे अँगरेज़ सरकार की अधीनता में रहकर काम करना पड़ता है। इसके विपरीत यद्यपि जापान, जर्मनी आदि देश बहुत छोटे-छोटे हैं, तथापि वे 'राज्य' कहे जाते हैं, कारण, वहां की सरकारें अपने-अपने देश का भीतरी तथा बाहरी प्रबन्ध करनेमें सर्वथा स्वतंत्र हैं, किसी के अधीन नहीं।

नागरिक या प्रजा—तुम बहुधा सुनते होगे कि हम भारतवर्ष के नागरिक हैं। स्मरण रखो कि 'नागरिक' का अर्थ केवल नगर में रहने वाला ही नहीं होता। जब इस शब्द का, राज्य के प्रसंग में, व्यवहार किया जाता है तो यह उस व्यक्ति का सूचक होता है, जिसे राज्य में खास-खास अधिकार होते हैं, और जिसे राज्य के प्रति विविध कर्तव्य पालन करने होते हैं। इन अधिकारों और कर्तव्यों, की बातें तो तुम्हें पीछे ज्ञात होगी, इस समय तुम इतना ही जान लो कि किसी राज्य में बहुत समय तक रहनेवाले आदमी उस राज्य के नागरिक या प्रजा कहलाते हैं। इस विषय में जाति-पांत, धर्म या सम्प्रदाय आदि की दृष्टि से कोई भेद-भाव नहीं माना जाता। उदाहरण के लिए जबकि तुम्हारे माता-पिता आदि चिरकाल से भारतवर्ष में रहते आये है, और तुम भी यहीं रहते हो, तो फिर चाहे तुम हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या पारसी किसी भी जाति या धर्म

के क्यों न हो, तुम सब भारतीय नागरिक कहे जाओगे। यही नहीं, यदि कोई अँगरेज़ या जापानी आदि भी यहां स्थायी रूप से बस जाय, तो वह और उसकी सन्तान भी भारतीय नागरिक मानी जायगी।

राज्य की उन्नति—तुम जानते हो कि कोई गाड़ी तब ही अच्छी तरह चलती है, जब उसके दोनों पहिये बराबर मज़बूत और खूब चलनेवाले हों। राज्य भी एक प्रकार की गाड़ी है, जिसके दो पहिये सरकार और नागरिक हैं। राज्य की उन्नति के लिए आवश्यक है कि दोनों ही अपने-अपने कर्तव्यों का उचित रीति से पालन किया करें। जिस प्रकार सरकार का कर्तव्य है कि नागरिकों की सब प्रकार से उन्नति तथा रक्षा करे, उसी तरह नागरिकों को भी चाहिए कि सरकार के नियमों (क़ानूनों) का पालन किया करें; तथा आवश्यकतानुसार उसकी सहायता करते रहें। नागरिकों को यह जानना चाहिए कि सरकार द्वारा उनके देश में क्या-क्या कार्य होते हैं, तभी वे बड़े होकर उनमें सहायक हो सकते हैं, तथा, जरूरत होने पर, उचित सुधार भी कर सकते हैं। अगले पाठों में इन बातों का कुछ सविस्तर वर्णन किया जायगा।

चौथा पाठ

सेना

पाठको ! पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि सरकार का एक कार्य, विदेशियों की चढ़ाई से, देश की रक्षा करना है। क्या ही अच्छा हो, यदि कोई राज्य किसी दूसरे पर आक्रमण न करे, और सब राज्य परस्पर में प्रेम-भाव रखें। परन्तु वर्तमान अवस्था में प्रायः हर एक राज्य को दूसरों के आक्रमण का भय रहता है। दूसरों से अपनी रक्षा करने के लिए, प्रत्येक देश में कुछ आदमी ऐसे रखे जाते हैं जो युद्ध-विद्या में निपुण हों, जिन्होंने तलवार, बन्दूक, तोप आदि चलाना सीख लिया हो। इन आदमियों के समूह को सेना कहते हैं।

सेना के भेद—अन्य देशों की तरह भारतवर्ष में भी प्राचीन काल में लड़ाइयां भूमि या स्थल पर ही होती थीं, और उनमें (स्थल सेना के) पैदल या घुड़सवार सिपाही भाग लेते थे। परन्तु, अब समुद्र पर भी लड़ाइयाँ होती हैं, इन लड़ाइयों में जलसेना काम करती है। जल सेना में लड़ाकू जहाज़, पनडुब्बियाँ तथा उनपर रहनेवाले सिपाही होते हैं। इसके अतिरिक्त, विज्ञान की उन्नति हो जाने के कारण, अब आकाश से हवाई जहाज़ों द्वारा बम के गोले बरसाये जा सकते हैं।

इसके लिए सरकार वायु सेना के आदमी तथा सामान रखती है। इस प्रकार आज कल सेना तीन प्रकार की होती है:—(१) स्थल सेना (२) जल सेना और (३) वायु सेना।

भारतवर्ष में स्थल सेना—पहले सेना कहने से स्थल सेना का ही बोध होता था। इस समय भी इसी का महत्व विशेष है। प्राचीन समय में यहां सेना 'चतुरंगिणी' होती थी, अर्थात् उसके चार अंग होते थे, पैदल सिपाही, घुड़सवार (रिसाला), रथ, और हाथी। तुमने सुना ही होगा कि महाभारत की लड़ाई में पांडवों की सेना का प्रधान व्यक्ति अर्जुन रथ पर सवार था, जिसे श्रीकृष्णजी ने हांका था। इसी प्रकार तुमने पढ़ा होगा कि पोरस और सिकन्दर की लड़ाई के समय यहां सेना में हाथियों का कैसा महत्वपूर्ण भाग था। आधुनिक काल में सेना में रथ और हाथी नहीं होते। हां, अब दो नये अंग और रहने लगे हैं, तोपखाना और 'सपरमेना'। इनमें 'सपरमेना' का अर्थ तुम न समझते होगे। सेना के इस अंग में इंजिनियर, और ओवरसियर आदि होते हैं, जो आगे जाकर सेना के लिए पुल सड़क आदि बनाते हैं।

भारतवर्ष में सेना के भिन्न-भिन्न भागों का अलग-अलग प्रान्तों से सम्बन्ध नहीं है, सब सेना भारत सरकार की निगरानी में रहता है। सेना का सदर मुक़ाम या हेडक्वार्टर शिमला है। प्रधान सेनापति को जंगी लाट या कमांडरनचीफ़ कहते हैं, वह प्रायः कुछ सदस्यों की एक सभा के परामर्श से काम करता है।

स्थल सेना का मुख्य भाग हर समय लड़ाई के लिए तैयार रहता

है। भारतवर्ष की सीमा पर, अथवा भारतवर्ष से बाहर जहां कहीं ज़रूरत हो, वहीं इसे भेजा जा सकता है। यह स्थायी रूप से रहता है। इसे 'रेग्यूलर' सेना कहते हैं। इसके सिपाहियों और अफ़सरों में लगभग ढ़ाई लाख आदमी हैं। ऊँचे अफ़सर अभी अधिकतर अँगरेज़ होते हैं। भारतवासियों को उच्च पदों पर कार्य करने का अवसर कम दिया जाता है, यद्यपि उनको योग्यता का अच्छा परिचय मिल चुका है।

कुछ सेना ऐसी होती है, जो देश के बाहर नहीं भेजी जाती, यहां ही लड़ती है। इसे मुल्की या 'टेरिटोरियल' सेना कहते हैं। इसमें लगभग अठारह हज़ार सैनिक हैं।

सेना का एक भाग नौकरी किये हुए ऐसे आदमियों का होता है, जो अपना-अपना निज का काम करते हैं, और आवश्यकता होने पर हथियारबन्द हो जाते हैं। इनमें अधिकांश योरोपियन, युरेशियन तथा ईसाई लोग ही हैं। ये प्रायः बन्दरगाहों, रेलों, छावनियों तथा नगरों की रक्षा करते हैं। इनकी सेना को सहायक सेना या 'अग्ज़ीलियरी फ़ोर्स' कहते हैं। इसमें लगभग चालीस हज़ार सैनिक हैं।

भारतवर्ष की बड़ी-बड़ी रियासतें अँगरेज़ अफ़सरों के अधीन कुछ पलटनें रखती हैं। इनमें रियासतों के आदमी भरती किये जाते हैं, और इनके लिए खर्च भी रियासतें ही करती हैं। इस प्रकार की सेना को भारतीय-राज्य-सेना या 'इंडियन स्टेटस फोर्सेज़' कहते हैं। इसमें लगभग तीन हज़ार सैनिक हैं।

भिन्न-भिन्न विश्वविद्यालयों में 'यूनिवर्सिटी ट्रेनिंग कोर' रहती है। इसमें कालिजों के कुछ ऐसे विद्यार्थी और प्रोफेसर होते हैं, जो सैनिक शिक्षा पाये हुए हों।

जल सेना—जल सेना की शक्ति लड़ाकू जहाज़ों से जानी जाती है। इसे 'रायल इंडियन मेरीन' कहते हैं। इसका काम सैनिक, तथा युद्ध का सामान लाना लेजाना, भारतीय समुद्र में पहरा देना, समुद्री डाकुओं का दमन, बन्दरगाहों की रक्षा और समुद्री नाप-जोख करना है। इसके कर्मचारियों में केवल एक तिहाई भारतवासी हैं। यह सेना स्वतन्त्र रूप से नहीं रहता, बल्कि ब्रिटिश जहाज़ी बेड़े का एक अंग होती है।

वायु सेना—वायुसेना की शक्ति का हिसाब वायुयानों (हवाई जहाज़ों) से लगाया जाता है। इसे 'रायल एअर फोर्स' और इसके संचालक को 'एअर कामोडोर' कहते हैं। यह प्रधान सेनापति की परामर्शदातृ सभा का सदस्य होता है। हवाई जहाज़ों पर बैठकर उड़ने की शिक्षा देने के लिए कुछ स्थानों में 'मिलिटरी फ्लाईंग स्कूल' खोले गये हैं। भारतवर्ष में वायुसेना का उपयोग अधिकतर पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में होता है।

सेना का कार्य—सेना का मुख्य कार्य देश की, बाहर के आक्रमणकारियों से, रक्षा करना है। इसलिए भारतवर्ष की पश्चिमी सीमा के क्वेटा और पेशावर आदि स्थानों पर काफ़ी सेना रहती है। आवश्यकतानुसार अन्य स्थानों से भी सेना वहां मँगायी जा सकती है। सीमा की रक्षा के अतिरिक्त, सेना आन्तरिक शान्ति के लिए

भी काम आती है और इस हेतु वह स्थान-स्थान पर छावनियों में रखी जाती है। साधारणतः शान्ति रखने का कार्य पुलिस का है और विशेष दशाओं में उपद्रव आदि होने पर सेना की सहायता ली जाती है, यहां तक कि विशेष आवश्यकता अनुभव होने पर उस स्थान का शासन-प्रबन्ध फ़ौजी अधिकारियों को ही सौंप दिया जाता है। यह तो सेना का भारतवर्ष सम्बन्धी कार्य हुआ। कुछ दशाओं में पार्लिमेंट की स्वीकृति होने पर, भारतीय सेना भारतवर्ष के बाहर भी, ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए, अथवा ब्रिटिश सरकार की सहायता के वास्ते भेजी जाती है। पिछले योरपीय महायुद्ध के समय पर, तथा कई अन्य अवसरों पर ऐसा हुआ है; आधुनिक महायुद्ध में भी ऐसा हो रहा है।

सैनिक शिक्षा—भारतवर्ष के लिए ब्रिटिश सिपाहियों और अफ़सरों की शिक्षा प्रायः इङ्गलैंड में होती है, उसका खर्च भारतवर्ष ही देता है। कुछ हिन्दुस्तानियों को भी वहां शिक्षा पाने की अनुमति है। इंगलैंड के सैंढर्स्ट कालिज में सैनिक शिक्षा पाने के योग्य बनाने के वास्ते कुछ नवयुवकों को यहां देहरादून आदि स्थानों में सैनिक योग्यता प्राप्त करायी जाती है।

जर्मनी आदि कुछ देशों में ऐसा नियम है कि प्रत्येक नवयुवक को कुछ समय अवश्य ही सैनिक शिक्षा प्राप्त करनी होती है। ये नवयुवक पीछे अपना-अपना काम करते रहते है, और ज़रूरत होने पर युद्ध में भाग ले सकते हैं। इस प्रबन्ध से यह सुविधा होती है कि स्थायी रूप से बहुत बड़ी सेना रखने की आवश्यकता नहीं होती, वह

ज़रूरत होने पर आसानी से बढ़ायी जा सकती है। इस प्रकार, देश पर शान्ति के समय, सेना के वेतनादि का भार बहुत साधारण रहता है, वह केवल युद्ध के समय ही बड़ा हुआ होता है। भारतवर्ष में इस तरह का प्रबन्ध नहीं है; यहां तो साधारण समय में ही पचास से लेकर अठत्तर करोड़ रुपये तक का खर्च प्रति वर्ष होता रहा है।

पाँचवाँ पाठ

पुलिस

पाठको! पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि देश को बाहर के शत्रुओं से बचाने के लिए सेना रखी जाती है। अब, इस पाठ में हम तुम्हें यह बतलायेंगे कि देश के भीतर लोगों की जान-माल की रक्षा करने के लिए क्या प्रबन्ध किया जाता है। तुम में से अधिकतर पाठक देश के भीतर ही रहते हैं, सीमा पर नहीं। इसलिए देश की आन्तरिक शान्ति के सम्बन्ध में कुछ बातें तुम स्वयं जानते होगे। तुम नित्य शहरों में और गांवों में पुलिस के आदमियों को रात में गश्त लगाते और पहरा देते हुए देखते हो। पुलिस के इन कामों का उद्देश्य यह होता है कि देश के अन्दर शान्ति रहे, चोर-डाकू उपद्रव न मचावें, अपराधियों की खोज की जाय, और उन्हें न्यायालय पहुँचाया जाय।

पहले यहां प्रत्येक गांव या शहर के आदमी अपनी रक्षा का प्रबन्ध स्वयं करते थे। वे शहरों में कोतवाल, तथा गांवों में चौकीदार और

नम्बरदार रखा करते थे। उन्हें पैदावार का कुछ भाग दिया जाया करता था। अँगरेज़ों की अमलदारी में यहाँ वेतन पानेवाली पुलिस रखी जाने लगी।

साधारण पुलिस—खाकी (या नीली) वर्दी और लाल दुपट्टेवाले पुलिस के सिपाही को तुम जानते ही हो। ज़िले में पुलिस दो तरह की होती है, एक के पास हथियार होते हैं, दूसरा के पास नहीं होते। हथियारबन्द अर्थात् सशस्त्र पुलिस का काम सरकारी ख़ज़ानों का पहरा देना, कैदियों के साथ जाना, और डाकुओं के दल पर चढ़ाई करना है। उसे फ़ौज़ी ढंग पर क़वायद करना और गोली चलाना सिखाया जाता है। अशस्त्र पुलिस सरकारी जुर्माना वसूल करती है, सड़कों पर भीड़ न होने देने का प्रबन्ध करती है, आवारा कुत्तों को मारती है, और अपराधियों को पकड़ती है। अपराधों को रोकने के लिए पुलिस पुराने अपराधियों पर दृष्टि रखती है। थानों में बदमाशों और गुण्डों का रजिस्टर रखा जाता है।

खुफ़िया पुलिस—सरकार कुछ कर्मचारी इसलिए भी रखती है कि वे गुप्त रूप से इस बात का पता लगाते रहें कि प्रजा के कौन-कौन आदमी सरकार के विरुद्ध षड्यंत्र, जालसाजी अथवा डकैती करते हैं या नकली सिक्का आदि बनाते हैं। इन कर्मचारियों को 'सी. आई. डी.' या खुफ़िया पुलिस कहते हैं। अन्य पुलिस की तरह इसके कर्मचारियों की कोई खास वर्दी नहीं होती। यह हमारे तुम्हारे जैसे ही कपड़े पहनते हैं, इस से इन्हें कोई पहचान नहीं सकता, और ये चुपचाप गुप्त रूप से अपना काम करते रहते हैं।

एक-एक प्रान्त की खुफ़िया पुलिस के प्रधान अफ़सर का दर्जा साधारण पुलिस के डिप्टी-इन्सपेक्टर-जनरल के समान होता है। इसके अधीन कुछ इन्सपेक्टर और सब-इन्सपेक्टर होते हैं।

अन्य पुलिस—सरकार कुछ पुलिस ऐसी भी रखती है, जिसे किसी खास जगह काम करना नहीं होता; जो, जहां ज़रूरत होती है, वहां भेज दी जाती है। इसे 'रिजर्व पुलिस' कहते हैं। जब सरकार को यह मालूम होता है कि किसी विशेष ग्राम या नगर में अधिक उपद्रव होते हैं, तो वहां वह इस पुलिस में से कुछ भेज देती है, और इसका खर्च उस स्थानवालों से वसूल करती है। इसे 'प्यूनिटिव' पुलिस कहते हैं। 'प्यूनिटिव' का अर्थ है, दण्ड सम्बन्धी।

स्टेशनों तथा रेलगाड़ियों में भी पुलिस की आवश्यकता होती है, इसके लिए अलग पुलिस रहती है। इसके आदमी स्टेशनों पर काम करते हैं, तथा रेल में मुसाफ़िरों के साथ जाते हैं।

पुलिस का संठगन—पुलिस का संगठन प्रान्तवार है, अर्थात् भिन्न-भिन्न प्रान्तों की पुलिस पृथक् पृथक् है। प्रान्तीय पुलिस का प्रधान, इन्स्पेक्टर-जनरल कहलाता है। वह साधारणतया इन्डियन सिविल सर्विस का मेम्बर होता है। उसके अधीन डिप्टी-इन्स्पेक्टर जनरल होते हैं। ये एक एक 'रेन्ज' का नियंत्रण करते हैं, जिसमें आठ दस ज़िले होते हैं। प्रत्येक ज़िले में एक पुलिस सुपरिंटेन्डेन्ट रहता है। यह ज़िले की शान्ति के लिए ज़िला-मजिस्ट्रेट के, तथा अपराधों की खोज और निवारण के लिए डिप्टी इन्स्पेक्टर-जनरल के, अधीन होता है। इसके नीचे एक या अधिक सहायक या डिप्टी सुपरिंटेंडेंट

रहते हैं।

प्रत्येक ज़िला तीन-चार सर्कलों या हल्कों में, और एक हल्का ४-५ पुलिस-स्टेशन या थानों में, विभक्त रहता है। थानों का औसत क्षेत्रफल १०० वर्ग मील है, इसके अन्तर्गत पुलिस-चौकियां होती हैं। प्रत्येक हल्का एक इन्स्पेक्टर के अधीन, और थाना सबइन्स्पेक्टर (थानेदार) के अधीन होता है। सबइन्स्पेक्टर अपराधों की खोज तथा जांच करता है, और अपने क्षेत्र की शान्ति का उत्तरदाता है। इन्स्पेक्टर का काम केवल निरीक्षण सम्बन्धी है। सबइन्स्पेक्टर के नीचे एक हेड कानेस्टेबल और कई कान्स्टेबल रहते हैं। शहरों में एक एक कोतवाल भी होता है। कलकत्ता, बम्बई और मदरास में पृथक् पृथक् पुलिस, कमिश्नरों तथा उनके दो या अधिक सहायकों के अधीन, रहती है। प्रत्येक थाने में कई-कई गांव होते हैं।

गांवों में पुलिस का काम चौकीदार करते हैं। जब वहां कोई चोरी आदि हो जाती है, तो चौकीदार उसकी सूचना थाने में करता है। थानेदार उसकी आवश्यक जांच तथा प्रबन्ध करता है। भारतवर्ष में थानों की संख्या दस हजार, और पुलिस कर्मचारियों की संख्या दो लाख है। कुल वार्षिक व्यय लगभग ग्यारह करोड़ रुपये हैं।

रेलवे पुलिस का संगठन पृथक् है। इसका ज़िला पुलिस से कोई सम्बन्ध नहीं है।

जनता के सहयोग की आवश्यकता—पुलिस अपराधियों की खोज या गिरफ़्तारी आदि का कार्य अच्छी तरह सफलता-पूर्वक तभी कर सकती है, जब उसे जनता का यथेष्ट सहयोग प्राप्त हो।

परन्तु यहां जन-साधारण का उससे सहयोग तो दूर रहा, उलटा वे उसे देख कर ही घबरा जाते हैं। इसका कारण यह है कि अधिकांश पुलिस-कर्मचारी अपने आपको प्रजा का सेवक न समझ कर उस पर अपनी धाक जमाने की फिकर में रहते हैं। लोगों को डर रहता है कि कहीं पुलिसवाले के निकट आने और उससे बातचीत करने से हम किसी व्यर्थ के झंझट में न फँस जायँ। आवश्यकता है कि पुलिस-वाले अपने कर्तव्य को समझें। उन्हें ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए कि वे अपने सेवा-कार्य और अपने महान् उत्तरदायित्व को ठीक तरह निभायें, वे लोगों से प्रेम और सभ्यता पूर्वक व्यवहार करते हुए हर प्रकार उनके सहायक हों। तब ही उन्हें जनता का सहयोग भी अच्छी तरह मिलेगा, जिसकी बहुत आवश्यकता है।

सड़क के नियम—तुम जानते हो कि पुलिस के सिपाही शहरों में सड़कों के चौराहे पर खड़े हुए यह देखते रहते हैं कि गाड़ी, इक्के, तांगे, साइकल तथा मोटर आदि ठीक नियम से चलते हैं या नहीं, उनसे किसी के चोट-चपेट तो नहीं आती, या कोई लड़ाई-झगड़ा तो नहीं होता। सड़क सम्बन्धी नियम प्रत्येक नागरिक को जानने चाहिएँ; हम यहां कुछ मुख्य-मुख्य नियम देते हैं :—

(क) पैदल चलनेवालों के लिए। (१) जहां तक सम्भव हो हमेशा अपने बायें हाथ को चलना चाहिए। जहां सड़क के दोनों ओर पटरी या पगडंडी हो तो उसका उपयोग करना चाहिए। सड़क के बीच में या दायीं ओर को न चलो। (२) सड़क पर खड़े होकर कोई काम या किसी से वार्तालाप न करो। (३) जब सड़क पार करनी हो तो

पहले देख लो कि सड़क पर किसी तरफ़ से कोई सवारी तो नहीं आ रही है, यदि आती दिखायी दे तो पहले उसे निकल जाने दो।

(क) सवारियों के लिए। (१) सड़क पर अपने बायें हाथ को रहो। (२) अत्यन्त आवश्यकता हुए बिना दूसरे से आगे न निकलो। विशेष दशा में जब आगे निकलना ही पड़े तो घंटी या पोंगा बजाकर आगे की सवारी को सूचित करदो। सूचना पाने पर आगेवाली सवारी बायीं तरफ़ हटकर पीछे आनेवाली सवारी को आगे बढ़ने के लिए रास्ता दे दे। (३) यदि किसी सवारी को रास्ते में, बिगड़ जाने से या किसी अन्य विशेष कारण से, रुकना पड़े तो उसे सड़क के बायीं तरफ़ किनारे पर खड़ा होना चाहिए। (४) बैलगाड़ीवालों को जब मालूम होता है कि कोई मोटर आ रही है तो उन्हें बहुधा बैलों को रोकने के लिए गाड़ी से नीचे उतरना पड़ता है, जिससे बैल मोटर से भड़क न जायँ। ऐसी दशा में बैलगाड़ीवालों को सड़क के बीच में न उतर कर उसके (बायें) किनारे उतरना चाहिए। (५) प्रत्येक सवारीवाले को चौराहे पर खड़े हुए पुलिस के आदमी के संकेतों का ज्ञान होना चाहिए और उसके आदेश का पालन करना चाहिए। (६) दिन छिपते ही प्रत्येक सवारीवाले को अपनी सवारी में रोशनी कर लेनी चाहिए।

छठा पाठ

अदालतें

पिछले पाठ में तुम पुलिस का हाल पढ़ चुके हो। जिस आदमी को पुलिस अपराधी समझ कर गिरफ़्तार करती है, अथवा जिसपर कोई मनुष्य किसी प्रकार का मुक़दमा चलाता है, उसके विषय में यह निश्चय करना होता है कि वह सचमुच अपराधी है या निर्दोष; और यदि अपराधी है, तो उसे क्या और कितना दंड मिलना चाहिए। यह कार्य पुलिस नहीं कर सकती, इसे न्यायालय या अदालत करती है। इसके लिए ख़ास आदमी रहते हैं, जिन्हें मुन्सिफ़, मजिस्ट्रेट या जज आदि कहते हैं। ये दोनों पक्ष की बातें सुनते हैं, बहुधा ये उनकी बातों के सम्बन्ध में, उनके पेश किए हुये गवाहों के बयान भी सुनते हैं। प्रायः दोनों पक्षवाले अपना-अपना वकील कर लेते हैं, जो अदालत को उनकी बात क़ानून की दृष्टि से समझाता है। मुक़दमे के बारे में आवश्यक बातें सुनकर अदालत यह फ़ैसला करती है कि जिस आदमी पर अपराध लगाया गया है, वह वास्तव में अपराधी है या नहीं। जिस आदमी को, वह अपराधी समझती है, उसे दंड देती है। दंड देने के विषय में सरकारी क़ानून की पुस्तकें मौजूद हैं, उनके अनुसार अपराध का विचार किया जाता है।

अदालतों की आवश्यकता—शायद तुम सोचते होगे कि ऐसे कार्य के लिए अदालत की क्या आवश्यकता है। जिस आदमी की कोई हानि हो, या जिसे चोट लगे, वही अपराध करनेवाले को अपनी इच्छानुसार दंड दे लिया करे। प्राचीन काल में बहुतसे स्थानों में ऐसा ही होता था। पर, इससे बहुत गड़बड़ मचती थी। उदाहरण के लिए, कल्पना करो कि राम से मोहन को कुछ हानि पहुँची, और मोहन स्वयं ही उसे दंड देने लगे। इस दशा में मोहन को इस बात का पूरा ख्याल रहना कठिन है कि जितनी उसकी हानि हुई है, वह उतना ही दंड (राम को) दे; सम्भव है, वह दंड अधिक ही दे। फिर, राम को दंड चाहे साधारण ही मिले, उसे तो यही ख्याल रहेगा कि मुझे दंड अधिक मिला है। इस विचार से, वह तथा उसके रिश्तेदार और मित्र, मोहन से बदला लेने का मौक़ा ढूँढते रहेंगे; और जब ये उससे बदला लेंगे, तो राम और उसके मिलने वालों का उनसे झगड़ा होगा। इस प्रकार समाज में पारस्परिक द्वेष और कलह बढ़ता ही जायगा। इसलिए पंच, पंचायत या अदालतों द्वारा न्याय कराना अच्छा है।

फ़ौजदारी और दीवानी मामले—तुमने कभी-कभी लोगों को यह कहते सुना होगा कि वहाँ फ़ौजदारी या मारपीट हो गयी, या यह कि उन लोगों का लेन-देन आपस में नहीं निपटा, अब दीवानी में मामला चलेगा। इस प्रकार अदालतों में जो मामले मुक़दमे चलते हैं, वे या तो फ़ौजदारी होते हैं, या दीवानी। इनका भेद उदाहरण द्वारा स्पष्ट हो जायगा। कल्पना करो कि एक आदमी चोरी करता है, या लूट-मार

करता है या किसी को गाली देता है। ये अपराध समाज के विरुद्ध माने जा सकते हैं; क्योंकि, ऐसा आदमी चाहे जिसका माल-असबाब चुरायेगा, और चाहे जिसे गाली देगा। ऐसे आदमियों से चाहे जिसकी हानि हो सकती है। इस प्रकार के, अर्थात् चोरी या मार-पीट आदि के, अपराध फ़ौजदारी के अपराध कहलाते हैं। इनका फ़ैसला फ़ौजदारी अदालतें करती हैं।

अब हम दूसरे प्रकार के अपराधों का उदाहरण लेते हैं। कल्पना करो कि एक आदमी किसी से रुपया उधार लेकर उसे चुकाता नहीं। यह उसी मनुष्य की हानि करता है, जिसने उसे उधार दिया है। समाज के दूसरे आदमी उससे इस प्रकार का व्यवहार न करके, हानि से बचे रह सकते हैं। ऐसे अपराधों को दीवानी अपराध, और, इनका फ़ैसला करनेवाली अदालतों को दीवानी अदालतें कहते हैं।

फ़ौजदारी अदालतें--कहीं-कहीं तो एक ज़िले में, और कहीं-कहीं कुछ ज़िलों के एक समूह में एक सेशन कोर्ट या फ़ौजदारी अदालत होती है। इसका प्रधान सेशन जज कहलाता है। यह वही व्यक्ति होता है जो ज़िला-जज की हैसियत से दीवानी मामलों का निपटारा करता है। सेशन जज फाँसी का दण्ड दे सकता है; परन्तु इस दण्ड की मंजूरी उस प्रान्त की ऊँची अदालत अर्थात् हाईकोर्ट से मिल जानी चाहिए।

सेशन जज अपने कार्य में कुछ अन्य सज्जनों की भी सहायता लेता है। ये शहर के अच्छे शिक्षित, और विचारवान लोगों में से चुने जाते हैं, इन्हें 'जूरर', तथा इनके समूह को 'जूरी' कहते हैं। साधारण छोटी

जगहों में इनके स्थान पर 'असेसर' रहते हैं। सेशनजज इन्हें मुकदमे की सब बात समझाकर इनकी सम्मति लेता है। जूरी की राय तो जज को माननी ही पड़ती है, परन्तु असेसरों की राय वह माने या न माने, यह उसकी इच्छा पर रहता है।

मजिस्ट्रेट और उनके अधिकार--सेशन जजों के नीचे पहले, दूसरे, और तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट रहते हैं। पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट को दो साल तक की क़ैद और एक हजार रुपये तक जुर्माना करने का अधिकार होता है। दूसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट छः महीने तक की क़ैद और दो सौ रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं। तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट एक मास की क़ैद और पचास रुपये तक जुर्माना कर सकते हैं। कुछ शहरों में आनरेरी मजिस्ट्रेट रहते हैं; ये अवैतनिक होते हैं, अर्थात् इन्हें तनख्वाह नहीं मिलती। इनमें से भी किसी को पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के अधिकार होते हैं, किसी को दूसरे दर्जे के, और, किसी को तीसरे दर्जे के।

दीवानी की अदालतें--प्रायः हर एक ज़िले में एक ज़िला-जज होता है। उसकी अदालत ज़िले में सबसे बड़ी दीवानी अदालत है; उसमें नीचे की अदालतों के फ़ैसलों की अपील हो सकती है। ज़िला-जज के नीचे 'सबजज' होते हैं। संयुक्तप्रान्त में सबजज को सिविल जज कहते हैं। इसके नीचे मुन्सिफ़ का दर्जा है। मुन्सिफ़ों के पास साधारणतः १०००) रु० तक के मुक़दमे पेश होते हैं। सबजज की अदालत में बड़ी-से-बड़ी रक़म तक का मामला दायर हो सकता है; ज़िला-जज की अदालत में १०,०००) रु० से अधिक का मुकदमा

दायर नहीं हो सकता।

अपराधियों को दंड—भारतवर्ष की अदालतों में प्रायः निम्न-लिखित दंड दिये जाते हैं:- (क) जुर्माना, (ख) बेत या कोड़े लगाना, (ग) सादी क़ैद (घ) सख़्त क़ैद, जिसमें कुछ समय की एकान्त की क़ैद भी सम्मिलित है, (च) देशनिकाला या काला-पानी, और (छ) प्राण-दंड या फांसी। सादी क़ैदवालों को कुछ काम नहीं करना पड़ता। सख़्त क़ैदवालों को, उनके लिए नियत किया हुआ कार्य करना होता है।

दंड देने के विशेषतया चार उद्देश्य होते हैं:—(१) समाज की, अपराधियों से रक्षा करना, (२) जिस व्यक्ति को दंड मिले, उसके आचरण का सुधार करना, (३) दूसरों को शिक्षा देना, जिससे वे ऐसे कार्य न करें, और, (४) जिसकी हानि हुई हो, उसे या उसके सम्बन्धियों को संतोष दिलाना। वर्तमान दंड-व्यवस्था से ये उद्देश्य कहां तक सिद्ध होते हैं, इसका विचार तुम बड़े होने पर कर सकोगे।

फ़ैसलों की अपील—यदि कोई मनुष्य अपने मुक़दमे के सम्बन्ध में किसी अदालत के फ़ैसले से संतुष्ट न हो तो वह उसका विचार उससे ऊँचे दर्जे की अदालत से करा सकता है। इसे 'अपील' करना, कहते हैं। फ़ौजदारी मुक़दमों में, दूसरे और तीसरे दर्जे के मजिस्ट्रेट के फ़ैसले की अपील ज़िला-मजिस्ट्रेट के यहां और पहले दर्जे के मजिस्ट्रेट के फ़ैसले की अपील सेशन जज के यहाँ होती है। 'सेशन जज' के फ़ैसले की अपील प्रान्त के चीफ़कोर्ट या हाईकोर्ट में होती है। फांसी की सज़ा पानेवाला गवर्नर या

वायसराय से दया के लिए प्रार्थना कर सकता है।

दीवानी के मुकदमों में मुन्सिफ़ के फ़ैसलों की अपील ज़िला-जज के पास हो सकती है, यदि वह चाहे तो उसे सबजज के पास भेज सकता है। सबजज या ज़िला-जज के फ़ैसलों की अपील, कुछ दशाओं में, हाईकोर्ट में हो सकती है। कुछ ख़ास हालतों में हाईकोर्ट के फ़ैसले की अपील देहली के संघ-न्यायालय या लन्दन (इंगलैंड) की 'प्रिवी कौंसल' तक भी पहुँचती है। इनके विषय में तुम पीछे पढ़ोगे।

रेवन्यू कोर्ट—मालगुज़ारी सम्बन्धी बातों का फ़ैसला करने के लिए कहीं-कहीं 'रेवन्यू कोर्ट' और कहीं-कहीं 'सैटलमेंट (बन्दोबस्त) कमिश्नर' हैं। इनके अधीन कमिश्नर, मजिस्ट्रेट, मुन्सिफ़, तहसीलदार आदि रहते हैं, इन्हें मालगुज़ारी सम्बन्धी फ़ैसला करने के थोड़े-बहुत अधिकार हैं।

भारतवर्ष में मुकदमेबाज़ी—एक समय था कि भारतवर्ष में लोग मुकदमेबाज़ी को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते थे। अब यह घरों को बरबाद करनेवाला ख़र्चीला काम दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है। दीवानी के मुक़दमों की वार्षिक औसत बीस लाख से ऊपर बैठती है, फ़ौजदारी के कम हैं। अदालतों में, अनेक मामलों में ठीक न्याय नहीं होता, अपराधी छूट जाता है, और निर्दोष को दंड मिल जाता है। लोगों को चाहिए कि अपना काम शान्ति और ईमानदारी से करें। यदि कभी किसी से कुछ झगड़ा हो ही जाय तो जहाँ तक हो सके, उसे आपस में पंच पंचायत द्वारा, निपटा लें। व्यर्थ मुकदमेबाज़ी करके धन लुटाने में क्या रखा है!

सातवाँ पाठ

जेल

पिछले पाठ में यह बताया जा चुका है कि अपराधियों को अदालतों से किस-किस प्रकार का दंड मिलता है। उनमें से एक दंड, क़ैद भी है। क़ैद की सज़ा पानेवालों के रहने के लिए बस्ती से बाहर ख़ास मकान बनवाये जाते हैं। इन मकानों में क़ैदी तथा उनका प्रबन्ध करनेवाले रहते हैं; दूसरे आदमी वहां नहीं रहने पाते। इन मकानों को 'जेल' या 'जेलख़ाना' कहते हैं। सम्भव है, तुमने बाहर से किसी जेल की दीवार देखी हो। जेल के चारों ओर की दीवार इतनी ऊँची और मज़बूत इस वास्ते बनायी जाती है कि क़ैदी भीतर से उसे फलांग कर बाहर न आ सकें।

जेलों के भेद—सब क़ैदियों की क़ैद की अवधि समान नहीं होती; अपराध के अनुसार किसी को थोड़े समय की क़ैद होती है, किसी को बहुत समय की। क़ैद की अवधि के अनुसार अलग-अलग प्रकार के जेलों का प्रबन्ध किया जाता है। जिन जेलों में साल भर

या अधिक समय के क़ैदी रहते हैं उन्हें 'सेन्ट्रल जेल' कहते हैं। कई-कई ज़िलों के वास्ते एक ही सेन्ट्रल जेल होता है। पन्द्रह दिन से लेकर साल भर तक के क़ैदी ज़िला-जेल में रहते हैं। पन्द्रह दिन से कम की सज़ावाले क़ैदी छोटी जेल में रहते हैं। इस प्रकार तुम्हें मालूम हो गया कि जेलों के तीन भेद हैं:—सेन्ट्रल जेल, ज़िला-जेल, और छोटे जेल।

जेलों का संगठन—जेलों का संगठन और प्रबन्ध प्रान्तवार है। एक प्रान्त के सब जेलों का सबसे उच्च अधिकारी इन्स्पेक्टर-जनरल कहलाता है। प्रत्येक जेल के क़ैदियों का प्रबन्ध, स्वास्थ्य और आचरणादि की देख रेख करने के लिए कुछ कर्मचारी रहते हैं। इनमें से सुपरिन्टेंडेंट, जेल के साधारण प्रबन्ध, खर्च, तथा क़ैदियों की मेहनत और सज़ा की निगरानी करता है। मेडीकल अफ़सर क़ैदियों के स्वास्थ्य और चिकित्सा आदि का ध्यान रखने के लिए होता है। 'जेलर' क़ैदियों के लिए पूर्ण रूप से ज़िम्मेवर होता है, वह हर समय जेल में अथवा जेल के पास ही रहता है, और क़ैदियों के लिए आवश्यक प्रबन्ध करता है। 'वारडर्स' अर्थात् जेल के पहरुओं का काम पुराने क़ैदियों से भी लिया जाता है। ज़िला-मजिस्ट्रेट अपने ज़िले के जेलों की देख रेख करता है।

क़ैदियों का रहन-सहन—प्रायः एक-एक प्रकार के अपराध करनेवाले सब क़ैदी जेल में इकट्ठे रहते हैं; फ़ौजदारी के एक जगह, दीवानी के दूसरी जगह। स्त्रियों को पुरुषों से अलग रखा जाता है। सख़्त क़ैदवालों को आठ-नौ घंटे काम करना होता है। ये मिट्टी खोदते,

मरम्मत करते, आटा पीसते, कोल्हू चलाते, पानी भरते, या कोई और काम करते हैं। इन्हें दरी, क़ालीन, निवाड़ या कपड़ा बुनने का अन्य कारीगरी का अभ्यास कराया जाता है, जिससे क़ैद से छूटने पर ये अपनी आजीविका सहज ही प्राप्त कर सकें, और, चोरी या लूट आदि करना छोड़ दें। जो क़ैदी दिया हुआ कार्य नहीं करते, उन्हें अधिक सख़्त काम दिया जाता है। कभी-कभी उन्हें शारीरिक दंड भी मिलता है। इसी प्रकार, जो क़ैदी अपना काम अच्छी तरह कर लेते हैं, और अफ़सरों को खुश रखते हैं, उनकी क़ैद की अवधि कम करदी जाती है।

कुछ समय से सरकार ने क़ैदियों की हैसियत के अनुसार, उनकी तीन श्रेणियां करदी हैं; 'ए', 'बी' और 'सी'। 'ए' श्रेणीवालों की सुविधाओं का विशेष ध्यान रखा जाता है, वे खाने पहनने की अच्छी चीज़ों को अपने घर से, अथवा अपने ख़र्च से भी मंगा सकते हैं। 'बी' श्रेणीवालों का दर्जा इनसे नीचा होता है। 'सी' श्रेणी सब से नीचे की है। अधिकांश कैदी इसी श्रेणी में रखे जाते हैं। इन्हें प्रायः खाने-पीने की अच्छी चीज़ें नहीं मिलतीं, ये उन्हीं वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं, जो इन्हें जेल से दी जाती हैं। इनकी शिकायतों पर बहुधा ध्यान नहीं दिया जाता। जेलों में बहुत से राजनैतिक कैदी भी रहते हैं।

छोटी उम्र के अपराधियों का सुधार करना आसान समझा जाता है। इसलिए पंद्रह वर्ष से कम उम्र के बालक प्रायः किसी 'रिफ़ॉर्मेटरी' या सुधारशाला में भेज दिये जाते हैं, जिससे शिक्षा पाकर वे कोई उद्योग धन्धा करने के योग्य बन जायँ। निस्सन्देह यदि ऐसी

संस्थाएँ यथेष्ट संख्या में हों, और इनमें सुयोग्य कार्यकर्ता रहें, तो इनसे बड़ा लाभ हो सकता है।

कालेपानी की सज़ा—कभी-कभी हत्या आदि घोर अपराध करनेवालों को जन्म भर के लिए या छः वर्ष के लिए देशनिकाले की सज़ा दी जाती है। इसे कालेपानी की सज़ा कहते हैं। इस सज़ा-वाले अपराधी अदमान टापू में, पोर्ट ब्लेयर स्थान में भेज दिये जाते हैं। वहाँ उनकी निगरानी के लिए एक सुपरिन्टेंडेंट तथा उसके कुछ सहायक कर्मचारी रहते हैं। आजन्म देशनिकाले की सज़ावाले साधारण-तया बीस वर्ष में स्वतंत्र हो जाते हैं, और सरकार से कुछ ज़मीन लेकर खेती द्वारा अपना निर्वाह करने लग जाते हैं। कालेपानी की सज़ा, अब कम होती है।

अपराधियों का सुधार—बहुधा वर्तमान जेल या कालेपानी से अपराधियों का विशेष सुधार नहीं होता; इसके विपरीत कुछ आदमी यह दंड भुगतने के बाद और अधिक अपराधी बन जाते हैं। फांसी की सज़ा से तो अपराधियों का सुधार न होकर उनके जीवन का ही अन्त हो जाता है, इसलिए कई सभ्य देशों में इस दंड को उठा दिया गया है। अपराधियों का वास्तव में सुधार कैसे हो, यह बहुत गम्भीर और विचारणीय विषय है। बड़े होने पर तुम इस सम्बन्ध में बहुतसी बातें जान सकोगे, तथा स्वयं भी कुछ विचार कर सकोगे।

आठवाँ पाठ

डाक और तार आदि

पाठको ! डाक के काम को तो तुम रोज़ देखते हो। इसके प्रबन्ध के कारण, तुम दूर दूर रहनेवाले अपने रिश्तेदारों या मित्रों के पत्र जल्दी और थोड़े ख़र्च से ही पा लेते हो। तुम्हें उनका समाचार मिल-जाता है, और तुम उनके पास अपनी ख़बर भेज सकते हो। जब किसी आदमी को दूर रहनेवाले अपने किसी भाई बन्धु या मित्र के सम्बन्ध में कुछ ऐसा समाचार जानना होता है कि उसका स्वास्थ्य कैसा है, या वह अपनी परीक्षा में पास हुआ या नहीं तो डाक बांटने वाले चिट्ठीरसां (पोस्टमेन) की कैसी इन्तज़ार की जाती है, यह तुम जानते ही होगे।

पत्रों की यात्रा—चिट्ठियों के एक जगह से दूसरी जगह जाने की क्रिया किस तरह होती है ? यह बात एक उदाहरण से तुम्हारी समझ में आजायगी। तीन पैसे का पोस्टकार्ड लेकर, उसमें, जिधर वह कोरा है, उधर अपना समाचार लिख दो, और दूसरी ओर पत्र पाने-वाले का नाम और पता लिख दो। अगर तुम्हें कुछ अधिक समाचार

लिखना हो तो इधर भी, आधे हिस्से में दांयी ओर पता लिखकर, शेष जगह में तुम समाचार लिख सकते हो। अगर तुम्हें इससे भी अधिक समाचार लिखना हो, या तुम यह चाहते हो कि तुम्हारा समाचार कोई दूसरा आदमी न पढ़ सके तो तुम अपना पत्र लिफ़ाफ़े में बन्द करके भेज सकते हो। डाक का लिफ़ाफ़ा पांच पैसे में मिलता है। सादे लिफ़ाफ़े में भी पत्र जा सकता है; परन्तु उस पर सवा आने का टिकट लगाना होगा।* अच्छा, तुम पोस्टकार्ड या लिफ़ाफ़े को लेटरबक्स में डाल दो। निश्चित समय पर डाक के आदमी लेटरबक्स की सब चिट्ठियां निकालकर डाकख़ाने ले जायंगे, वहां सब पर टिकट की जगह तारीख़ और स्थान की मोहर लगायी जायगी, फिर उन्हें थैले में बन्द करके रेलवे स्टेशन पर भेज देंगे। रेलगाड़ी के एक या अधिक डिब्बों में डाक के आदमी रहते हैं, वे एक-एक स्टेशन की चिट्ठियां अलग-अलग छांट लेंगे और क्रमशः उन्हें वहां देते जायंगे। स्टेशन से डाक के थैले डाकख़ाने में पहुंचाये जायँगे। वहां चिट्ठियों पर फिर स्थान और तारीख़ की मोहर लगायी जायगी। पश्चात् पोस्टमैन चिट्ठियों को उन-उन आदमियों में बांट देंगे, जिन-जिन के नाम की वे हैं। जो पत्र किसी गांव के होंगे, उन्हें गांव में जानेवाला पोस्टमैन ले जायगा। अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि चिट्ठियां एक जगह से दूसरी जगह कैसे पहुँचती हैं। मोहर को देखकर तुम जान सकते हो चिट्ठी कब चली थी, और कब तुम्हारे यहां के डाकख़ाने में आयी।

---

* पिछले योरपीय महायुद्ध से पहले पोस्टकार्ड एक पैसे का, और लिफ़ाफ़ा दो पैसे का था।

डाक भेजने के साधन— ऊपर बताया जा चुका है कि डाक भेजने का काम रेल द्वारा होता है गांवों में डाक देहाती पोस्टमैन लेजाता है, वह या तो पैदल जाता है, या घोड़े या ऊंट आदि की सवारी पर। इनके अतिरिक्त डाक भेजने के और भी साधन हैं। बहुतसी जगहों में अब मोटर द्वारा ही डाकका काम जल्दी और सुभीते से हो जाता है।

इङ्गलैड, अमरीका आदि देशों की डाक यहाँ जहाज़ से आती है। स्थल मार्ग से उनका भारतवर्ष से सम्बन्ध नहीं है। रास्ते में समुद्र पड़ता है। स्थल-मार्ग से डाक के आने में देर भी बहुत लगती है, इसलिए जहाज़ों से काम लिया जाता है। अब हवाई जहाज़ों का प्रचार बढ़ता जा रहा है। इनके द्वारा डाक (तथा अन्य सामान) के आने में जल-मार्ग या स्थल-मार्ग का प्रश्न ही नहीं रहता। ये हवा के रास्ते आते हैं, और बहुत जल्दी यात्रा तय करते हैं। हां, अभी इनके द्वारा डाक भेजने में खर्च बहुत पड़ता है। आशा है, धीरे-धीरे उन्नति हो जाने पर, वह घटता जायगा।

डाकखाने के अन्य काम—पत्रों की तरह अखबार तथा पुस्तकों आदि के पार्सल भी डाक द्वारा जहां तहां भेजे जाते हैं। यही नहीं, डाक से रुपयों का मनीआडर भी भेजा जाता है। मनीआडर भेजनेवाला, एक ख़ास प्रकार का 'फ़ार्म' भरकर, उसे, रुपये सहित अपने यहां के डाकखाने में देता है। यह फ़ार्म उस स्थान पर भेज दिया जाता है, जहां का इस पर पता होता है। मनीआडर लेनेवाला इस पर दो जगह हस्ताक्षर करके

पोस्टमेन को लौटा देता है, और रुपया ले लेता है। एक हस्ताक्षर डाकखाने में रह जाता है, और दूसरा रुपया भेजनेवाले के पास पहुंचा दिया जाता है। स्मरण रहे कि जब एक मनीआर्डर फार्म एक जगह से दूसरी जगह भेजा जाता है तो उसके साथ उसमें लिखी हुई रक़म नहीं भेजी जाती। जैसे एक डाकखाने को दूसरे का रुपया देना होता है, वैसे लेना भी तो होता है, क्योंकि मनीआर्डर जाते हैं, तो आते भी हैं। फिर, प्रत्येक डाकखाने में कुछ रुपया जमा रहता है। कमी-वेशी की रक़म इसमें से देकर काम चला लिया जाता है। कुछ समय बाद डाकखाने आपस में लेनदेन का हिसाब इकट्ठा चुका लेते हैं। मनीआर्डर की फीस दस रुपये तक दो आने और इससे अधिक पचीस रुपये तक चार आने हैं। यही दर आगे अधिक रकमों के लिए है। मनीआर्डर छः सौ रुपये तक का जा सकता है। रुपया भेजने को एक दूसरी विधि भी है। पांच रुपये या दस रुपये का 'पोस्टल आर्डर' डाकखाने से क्रमशः ५) और १०) देकर खरीदा जा सकता है। इस पर पानेवाले का नाम लिख कर इसे डाक से लिफाफे में भेजा जाता है। इसे पानेवाला डाकखाने में इस पर हस्ताक्षर करके दे देता है, और उसे इसका रुपया मिल जाता है। इसमें फ़ायदा यही है कि लिफाफे में पत्र भी चला जाता है। बड़ी रक़म भेजने से शुल्क में भी किफायत हो जाती है। उदाहरण के लिए ५०) रुपये के पोस्टल आर्डर ५०।-) में मिल जाते हैं, -)। लिफाफे का जोड़कर कुल खर्च ५०।=)। होता है, जबकि इतनी रक़म मनीआर्डर से भेजने में ५०॥) खर्च होते हैं।

डाकखानों में 'सेविंग बैंक' नाम का भी एक खाता रहता है। उसमें आदमी अपना रुपया जमा कर सकते हैं। इस विषय में विशेष 'रुपया-पैसा और बैंक' नाम के पाठ में लिखा जायगा।

पोस्ट-आफिस कैश सर्टिफ़िकट—डाकख़ाने में रुपया जमा करने का एक और भी ढङ्ग है। निर्धारित मूल्य देकर उसके, एक निश्चित अवधि तक के सूद सहित क़ीमतवाले काग़ज़ डाकख़ाने से ख़रीदे जा सकते हैं। ये काग़ज़ कैश सर्टिफ़िकट कहलाते हैं। इनकी क़ीमत समय-समय पर बदलती रहती है। आजकल (मई सन् १९४१ ई०) आठ रुपये तेरह आने देकर ऐसे काग़ज़ ख़रीदे जा सकते हैं, जिनकी क़ीमत पाँच साल में १०) हो। इसी प्रकार ८८=) जमा करने से पाँच साल में १००) मिल जाते हैं। इसमें विशेष लाभ यह है कि रुपया डाकख़ाने में एक बार जमा करके उसे जल्दी उठाने की प्रवृत्ति नहीं होती, उसे पाँच साल तक जमा रखने की ही इच्छा होती है। यों रुपया बीच में भी लिया जा सकता है, पर उस दशा में सूद बहुत कम मिलता है।

रजिस्टरी और बीमा—डाक से जो चिट्ठी या पार्सल आदि जाता है, उसके साधारण महसूल के अलावा अगर तुम उस पर तीन आने का टिकट और लगा दो तो उसकी रजिस्टरी हो जाती है। डाकख़ाने उसका अधिक अहतयात करते हैं। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हें उसके पानेवाले के हाथ की रसीद मिल जाय तो तुम रजिस्टरी करने के अतिरिक्त एक आने का टिकट और लगाओ तथा एक 'एकनालेजमेंट' फ़ार्म भरकर डाकख़ाने में दे दो। यह फ़ार्म तुम्हारे

पास पानेवाले के हस्ताक्षर होकर आ जायगा। अगर तुम अपनी भेजी जानेवाली वस्तु की और अधिक सुरक्षा चाहते हो तो तुम उसका बीमा करा सकते हो। सौ रुपये तक के बीमे के लिए तीन आने का टिकट और ज्यादह लगेगा। यदि संयोग से बीमे की वस्तु खोयी जाय और उसका पता न लगे तो डाकखाना तुम्हें उतनी रक़म देनदार होगा, जितनी का तुमने बीमा कराया है।

तार--यदि कहीं कुछ समाचार तुरन्त ही पहुँचाना हो, तो तार भेजा जा सकता है। तार से मिनटों में ख़बर कहीं से कहीं जा सकती है। हाँ यह ज़रूर है कि डाक की अपेक्षा इसमें ख़र्च अधिक होता है। तथापि, हर रोज़ देश में हज़ारों तार जाते हैं। समाचार पत्रों को दूर-दूर की ताज़ी ख़बरें छापने के लिए तारों से बड़ा सुभीता है।

तार से व्यापारियों को भी बड़ा लाभ होता है। व्यापारी तार द्वारा दूर देशों में माल का भाव ठहरा लेता है और क्रय-विक्रय (ख़रीद-बेच) झटपट हो जाता है। ज़रूरत होने पर तार द्वारा रुपयों का मनिआर्डर भी भेजा जाता है। इसमें रुपया भेजनेवाले के भरे हुए फ़ार्म का इन्तज़ार नहीं किया जाता। जब एक डाकखानेवाले दूसरे डाकखाने के अधिकारियों से, तार द्वारा, किसी को रुपया देने की सूचना पाते हैं, वे उसे रुपया दे देते हैं। तार विभाग से राज्य-प्रबन्ध में भी बड़ी सुविधा होती है। भिन्न-भिन्न स्थानों के अफ़सर तार द्वारा सलाह-मशवरा कर सकते हैं, और, आवश्यकतानुसार सेना या पुलिस, तथा अन्य ज़रूरी सामान भेजने के लिए कहा जा सकता है।

डाक और तार विभाग का संगठन—भारतवर्ष में डाक और तार का एक ही विभाग है, उसका देश भर में सबसे बड़ा अधिकारी 'डायरेक्टर जनरल' कहलाता है। इस विभाग के प्रबन्ध के लिए यह देश कुछ 'सर्कलों' में, और प्रत्येक सर्कल कुछ डिविज़नों में बँटा हुआ है। सर्कल के अधिकारी को 'पोस्ट-मास्टर-जनरल' और डिविज़न के अधिकारी को 'सुपरिन्टैन्डेंट' कहते हैं। हर एक सुपरिंटेंडेंट के नीचे कुछ इन्स्पेक्टर रहते हैं, जो कई-कई ज़िलों के डाकख़ानों का निरीक्षण करते हैं। प्रत्येक ज़िले में एक बड़ा डाकख़ाना होता है, उसका मुख्य अधिकारी पोस्ट-मास्टर कहलाता है। ज़िले में कुछ 'ब्रांच-पोस्ट-आफ़िस' और कुछ 'सब-पोस्ट-आफ़िस' भी होते हैं। बड़े-बड़े गांवों में भी डाकख़ाने हैं, उनका काम प्रायः वहां मुख्याध्यापक ही करते हैं, उन्हें इस काम के लिए कुछ भत्ता (अलाउँस) मिलता है।

भारतवर्ष में अभी बहुतसे स्थानों में डाकख़ाने नहीं हैं। कितने ही स्थान ऐसे हैं, जहां से डाकख़ाना कई-कई मील दूर है और डाक हफ़्ते में केवल एक या दो दिन जाती है। इसलिए देश में बहुत से नये डाकख़ानों के खोले जाने की ज़रूरत है। इधर कुछ समय से, पोस्टकार्डों और लिफाफों का मूल्य, तथा डाक और तार सम्बन्धी अन्य महसूल बढ़ जाने से सर्वसाधारण को बहुत असुविधा हो गयी है। इसमें सुधार की आवश्यकता है।

डाक और तार सम्बन्धी नियम—डाक तथा तार सम्बन्धी सब नियम 'पोस्ट एण्ड टेलीग्राफ गाइड' नामक पुस्तक में छपे रहते हैं।

उसमें भारतवर्ष के सब डाकखानों तथा तारघरों की सूची भी रहती है। यह पुस्तक बड़े डाकखानों से एक रुपये में मिलती है पाठकों की जानकारी के लिए कुछ मुख्य-मुख्य नियम आगे दिये जाते हैं:—

डाकखाने प्रायः दस बजे से चार बजे तक खुले रहते हैं, कहीं-कहीं उनका समय सबेरे सात बजे से दोपहर तक तथा दो से चार बजे तक होता है। इतवार और खास-खास त्योहारों की छुट्टियां रहती हैं। अन्य दिनों में मनिआर्डर प्रायः तीन बजे तक लिये जाते हैं, हां शनिवार को मनिआर्डर एक बजे तक, तथा पत्रों पेकटों और पार्सलों की रजिस्टरी तीन बजे तक हो सकती है। 'लेट फी' का एक आने का टिकट लगाकर पत्रों की, तथा दो आने का टिकट लगाकर पेकटों की, रजिस्टरी शनिवार के दिन चार बजे तक भी हो सकती है। पत्र स्टेशन पर डाकगाड़ी के समय भी, 'लेट फी' टिकट लगा कर, भेजे जा सकते हैं।

छपनेवाली चीज़ (प्रेस मेटर), बीजक, बिल, आर्डर, पुस्तक, सूचीपत्र, विज्ञापन आदि 'बुक-पोस्ट' में जा सकते हैं। इनका पेकेट इस तरह बनाया जाना चाहिए कि सिरे खुले रहें. डाकखानेवाले चाहें तो इस बात की जांच कर सकें कि इसके अन्दर कोई निजी पत्र आदि तो नहीं है। 'बुक-पोस्ट' पेकेट का महसूल इस समय पांच तोले तक के लिए तीन पैसे, और उससे ऊपर फी ढाई तोले एक पैसा है। सामयिक (दैनिक, अर्द्धसाप्ताहिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि) पत्र पत्रिकाओं की रजिस्टरी करायी जा सकती है। रजिस्टर्ड पत्र-पत्रिका का महसूल आठ तोले तक एक पैसा और उससे ऊपर बीस तोले तक दो पैसे होता है। वह जिस डाकखानेसे रजिस्टर्ड होगा, उसी डाकखाने में उसपर उपर्युक्त महसूल लगेगा,

अन्य डाकखानों में उस पर बुक-पोस्ट के हिसाब से महसूल देना होगा।

कार्ड, लिफाफा, पेकेट, या समाचारपत्र बिना टिकट या कम टिकट लगा कर भेजने से बैरंग कर दिया जाता है, इस दशा में जितना टिकट कम होगा, उसका दूना महसूल उस पत्र आदि के पानेवाले से लिया जायगा। यदि बैरंग पत्र आदि को वह व्यक्ति लेना स्वीकार न करे, जिसका उस पर पता है तो उसे भेजनेवाले के पास लौटा कर उससे उपर्युक्त दूना महसूल लिया जाता है। यदि वह महसूल न चुकाये तो उसकी सब डाक, पत्र, मनिआर्डर आदि महसूल चुकाये जाने तक रोक रखी जायगी।

पुस्तकें आदि चारों तरफ से अच्छी तरह बन्द करके भी डाक से भेजी जाती हैं। बहुमूल्य कागज़ात वस्त्र आभूषण आदि को उसके ऊपर कपड़ा सी कर भेजा जाता है। इन 'पार्सलों' का महसूल प्रत्येक चालीस तोले तक चार आना है। पार्सल के भीतर निजी पत्र रखा जा सकता है। इसका पूरा महसूल भेजनेवाले को ही देना पड़ता है। वह चाहे तो इसको रजिस्टरी तथा बीमा भी करा सकता है अथवा बिना रजिस्टरी (अन-रजिस्टर्ड) ही भेज सकता है।

यदि पत्र आदि भेजनेवाला यह चाहता है कि उसका पत्र नियत स्थान पर पहुँचने के बाद पानेवाले को तुरन्त मिल जाय तो उस पत्र पर दो आने का टिकट अधिक लगाना होता है। ऐसे पत्र पर 'एक्सप्रेस डिलीवरी' की एक लाल चिट चिपकादी जाती है। यह पत्र अपने स्थान पर साधारण डाक के साथ ही पहुँचता है, परन्तु इस के दिये जाने की व्यवस्था पहले कर दी जाती है।

डाक में चिट्ठी आदि डालने की भी रसीद मिल सकती है। उसे 'पोस्टल सर्टिफिकट' या 'सर्टिफिकट आफ पोस्टिंग' कहते हैं। साधारण बोलचाल में इसे कच्ची रजिस्टरी कह देते हैं। इसके लिए छपे हुए फार्म होते है, फार्म न होने पर सादे कागज़ पर. चिट्ठी आदि के पानेवाले का पता लिखकर दे देने से भी काम चल सकता है। इस रसीद के लिए, तीन पत्रों या पेकटों तक के लिए दो पैसे का टिकट लगाना पड़ता है। डाक कर्मचारी उस पर मोहर लगा देता है। इससे पत्र आदि भेजने-वाले के पास इस बात का सबूत रहता है कि उसने डाक में पत्र डाला। परन्तु डाकखाना इसके लिए कोई जिम्मेवारी नहीं लेता।

डाकखाने से पेकेट या पार्सल वी० पी० से भी जाते है। डाक महसूल तथा रजिस्टरी खर्च सहित जितना रुपया किसी चीज का लेना होता है, उतने की वी० पी० की जाती है। इसके लिए फार्म भरकर देना होता है। डाकखाना उस चीज को पानेवाले के पास पहुंचा देता है, और उससे वी० पी० की रकम तथा उस रकम का मनिआर्डर शुल्क ले लेता है। वी०पी० की रकम चीज भेजनेवाले को मिल जाती है, मनिआर्डर शुल्क डाकखाने में रह जाता है। जिसके पास वी० पी० भेजा जाता है, अगर वह उसे लेने से इनकार करता है तो वी० पी० की वस्तु, भेजनेवाले को लौटा दी जाती है। इस दशा में डाक महसूल तथा रजिस्टरी-खर्च के टिकट रद्द हो जाने से भेजनेवाले को इतना नुकसान सहना पड़ता है।

तार दो प्रकार का होता है—साधारण और एक्सप्रेस (अरजेंट या अत्यावश्यक)। साधारण तार का शुल्क आठ शब्दों तक के लिए दस आने है, और उनके बाद प्रति शब्द एक आना है। एक्सप्रेस तार का

महसूल इससे दूना होता है। जबाबी तार देने के लिए उसका महसूल पहले जमा करना होता है, इस पर पानेवाले को तार के साथ उत्तर के लिए एक फार्म दिया जाता है। अगर वह तीन मास तक इस फार्म का उपयोग न करे तो दरखास्त देने पर उसे इसका शुल्क मिल जाता है।

समाचार-पत्रों के लिए तार का शुल्क ४८ शब्दों तक के लिए आठ आना और इसके बाद प्रति ६ शब्दों के लिए एक आना है।

अगर किसी आदमी को यह शिकायत हो कि डाकखाने या तारघर में उसका काम ठीक नहीं हुआ, उसकी चिट्ठी या तार देर में मिला, अथवा मनिआडर का रुपया नहीं आया, तो वह इस बात की शिकायत डाकखाने के पोस्टमास्टर को कर सकता है। उस पर आवश्यक कार्रवाई की जायगी।

बेतार-का-तार और टेलीफोन--भारतवर्ष के प्रसिद्ध नगरों में बेतार-के-तार या 'वायरलेस' का भी प्रबन्ध है। इसके द्वारा इन नगरों में तथा अन्य देशों के प्रधान नगरों में, बहुत जल्द समाचार आ जा सकता है। समुद्र पार के स्थानों में, अथवा समुद्र में एक जहाज़ से दूसरे जहाज़ पर, समाचार भेजने के लिए बेतार-का तार ही काम में लाया जाता है। अब रेडियो द्वारा समाचार भेजने की ऐसी अच्छी व्यवस्था हो गयी है कि एक वक्ता का भाषण, दूसरे आदमी हज़ारों मील के फ़ासले पर अपने-अपने घरों में, इस यंत्र के पास बैठे हुए साफ़-साफ़ सुन सकते हैं।

आज कल 'टेलीफ़ोन' का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। इसका अधिकतर सम्बन्ध एक ही देश के अन्दर भिन्न-भिन्न स्थानों से, या एक-एक नगर के ही भीतर रहता है। बड़े-बड़े शहरों में, एक जगह

से दूसरी जगह जाने आने में काफ़ी समय लगता है, और काम-काजी आदमियों को फ़ुरसत बहुत कम मिलती है। टेलीफ़ोन के द्वारा आदमी अलग-अलग स्थानों में, अपनी-अपनी दुकान या दफ़्तर आदि में बैठे हुए कई-कई मिनिट तक लगातार बातचीत कर सकते हैं। बेतार-के-तार और टेलीफ़ोन के नियम तुम पीछे जान लोगे।

नवाँ पाठ

रेल और मोटर

पिछले पाठ में तुम पढ़ ही चुके हो कि रेल और मोटर आदि से डाक के काम में बड़ी सहायता मिलती है। इनका प्रचार होजाने से आज कल दूर-दूर के स्थानों में यात्रा करने की बड़ी सुविधा हो गयी है। पहले आदमी पैदल जाते थे, या घोड़ों या ऊँट पर सवार होकर; या बैलगाड़ी और घोड़ागाड़ी आदि में। इनमें सफ़र तय करने में समय बहुत लगता था, तथा थकावट अधिक होती थी। अब साइकल, ट्रामवे आदि अनेक सवारियां चल पड़ी हैं। हवाई जहाज़ों का भी प्रचार बढ़ता जा रहा है। परन्तु सर्वसाधारण के लिए, लम्बी-लम्बी यात्रा करने की अन्य सवारियों में इतनी सुविधा नहीं होती, जितनी रेलों और मोटरों में। इस पाठ में इनका वर्णन करना है। पहले रेलों के बारे में विचार करते हैं।

रेल से यात्रा—तुम हर रोज़ रेलवे स्टेशनों पर देखते होगे

कि हज़ारों आदमी रेल का टिकट लेकर एक जगह से दूसरी जगह आते जाते हैं। प्रत्येक टिकट पर यह छपा रहता है कि वह किस स्टेशन से, किस स्टेशन तक के लिए है; और, उसका मूल्य क्या है। उस पर तारीख़ और नम्बर भी लिखा रहता है। यदि किसी का टिकट खो जाय तो नम्बर और तारीख़ बताने से उसका काम चल सकता है; नहीं तो उसे फिर दाम भरने पड़ते हैं।

रेलों से अन्य लाभ—स्टेशनों पर सवारी गाड़ी के अलावा तुमने मालगाड़ियां भी देखी होंगी। इनमें हज़ारों मन माल इधर से उधर भेजा जाता है। इस प्रकार रेलों से व्यापार की खूब वृद्धि होती है। यदि देश में एक जगह अकाल पड़ रहा हो तो खाने के पदार्थ दूसरी जगह से, जहां वे अधिक हों, जल्दी ही उस जगह लाये जाकर, बहुत-से आदमियों को भूखा मरने से बचाया जा सकता है।*

रेलों द्वारा सरकार को राज्य-प्रबन्ध के लिए पुलिस या फ़ौज एक जगह से दूसरी जगह भेजने में भी बड़ी सुविधा तथा किफ़ायत होती है। इसके अतिरिक्त रेलों से मनुष्यों के विचारों तथा रहन-सहन पर भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। देश के जिन भागों में रेल चलती है, वहां के लोगों को एक-दूसरे से मिलने का अवसर बहुत आता है। भिन्न-भिन्न जातियों के, तथा अलग-अलग धर्मों को माननेवाले, आदमी परस्पर में मिलने-जुलने से एक दूसरे को अधिक जानने लगते

---

*रेलों से एक हानि भी है; बहुतसे पदार्थों को व्यापारी उन देशों में भेज देते हैं, जहां वे महँगे हों; फिर वे पदार्थ हमारे देश में पहले की तरह सस्ते नहीं रहते, बहुतसा माल विदेशों में चले जाने के कारण यहां उनका भाव चढ़ जाता है।

है, और, उनमें सहयोग और सहानुभूति का भाव बढ़ जाता है। भारतवर्ष में छूतछात के विचारों को दूर करने में रेलों ने बड़ी सहायता की है। रेलों में पास-पास बैठने के कारण, अब भिन्न-भिन्न जातियों के आदमियों को एक-दूसरे से पहले जैसा परहेज़ नहीं रहा।

रेलों का विस्तार—भारतवर्ष में रेलों का काम, लगभग अस्सी वर्ष हुए, आरम्भ हुआ था। अब लगभग पचास हज़ार मील रेलवे लाइन है। बहुतसी रेलवे लाइनों की मालिक सरकार है। कुछ भिन्न-भिन्न कम्पनियों की हैं, कुछ देशी राजाओं की हैं, तथा थोड़ी-सी लाइन ज़िला-बोर्डों को उत्साहित करके बनवायी गयी हैं। रेलवे लाइनों की चौड़ाई भिन्न-भिन्न स्थानों में अलग-अलग है। छोटी लाइनें दो, ढाई फुट की, और बड़ी लाइनें ५ से ५½ फुट तक की हैं।

रेल सम्बन्धी मुख्य-मुख्य नियम—प्रत्येक रेलवे का अलग-अलग तथा सब रेलों का इकट्ठा 'टाइमटेबल' बड़े-बड़े स्टेशनों पर मोल मिलता है। उसमें रेल-सम्बन्धी नियम ब्योरेवार दिये होते हैं, तथा यह भी लिखा रहता है कि कौनसी गाड़ी किस स्टेशन पर किस समय पहुँचती है और कितनी देर ठहरती है, और भिन्न-भिन्न स्टेशनों में कितने मील का अन्तर है। हम यहाँ पर पाठकों की जानकारी के लिए कुछ थोड़ेसे मुख्य-मुख्य नियम देते हैं:—

प्रत्येक व्यक्ति जो रेल में सफ़र करना चाहे, उसे रेलवे टिकट लेना चाहिए। गाड़ी न मिलने या उसमें जगह न रहने के कारण, अगर कोई आदमी टिकट लेकर गाड़ी में न बैठ सके तो उसे चाहिए कि टिकट वापिस करदे और टिकट का मूल्य वापिस लेने के

लिए दर्खास्त दे दे। तीन वर्ष तक के बच्चों के लिए टिकट लेने की आवश्यकता नहीं है, और तीन वर्ष से ग्यारह वर्ष तक के बालकों लिए आधा टिकट लेना काफ़ी है। टिकट उसके ख़रीदने के दिन, या उसकी मियाद के भीतर ही काम आ सकता है। बिना टिकट सफ़र करने-वालों से पूरा किराया तथा जुरमाना (जो टिकट के मूल्य का दूना तक हो सकता है) वसूल किया जाता है या उन्हें अन्य दंड दिया जाता है।

यात्रा करनेवाले को चाहिए कि गाड़ी के समय से इतना पहले स्टेशन पर आवे की शान्ति से टिकट लेकर गाड़ी में बैठ सके। यदि कभी संयोग से टिकट न लिया जा सके तो वह गार्ड को सूचना देकर गाड़ी में बैठ सकता है। इस दशा में उससे आगे स्टेशन पर साधारण किराया ही लिया जायगा, जुरमाना आदि नहीं।

अगर गाड़ी में बहुत भीड़ हो तो मुसाफ़िर गार्ड से कह कर, जिस दर्जे का उसने टिकट लिया है, उससे ऊपर के दर्जे में बैठ सकता है। उस दर्जे का किराया जितना वह उस टिकट के मूल्य से अधिक हो, उतरनेवाले स्टेशन पर दे देना चाहिए। सब मिलाकर रेल में चार दर्जे होते हैं। सबसे निचला दर्जा तीसरा (थर्ड क्लास) होता है, उससे ऊपर ड्यौढ़ा (या इंटर), फिर दूसरा दर्जा (सेकिंड क्लास) और सबसे ऊँचा अव्वल दर्जा (फ़र्स्ट क्लास) होता है। टट्टी या पेशाब के लिए सभी दर्जों में व्यवस्था होती है। तीसरा दर्जा मामूली होता है ड्योढ़े दर्जे में भीड़ कम रहती है। दूसरे तथा अव्वल दर्जे में तो सोने के लिए खूब जगह होती है, बैठने या लेटने की जगह गद्दी रहती है, बिजली के पंखे तथा स्नान आदि की भी व्यवस्था रहती है। इन दर्जों के

टिकटों का किराया उत्तरोत्तर अधिक है। उदाहरणवत् बी० एन० डबल्यू रेलवे में सौ मील का तीसरे दर्जे का किराया १≈), ड्यौढ़े दर्जे का २~) दूसरे दर्जे का ४॥≈) और अव्वल दर्जे का ६।=) है। रेल किराया समय समय पर बदलता रहता है, पर भिन्न-भिन्न दर्जों के किराये का अनुपात प्रायः समान ही रहता है। बिस्तरे के अतिरिक्त, तीसरे दर्जे का यात्री अपने साथ १५ वज़न का सामान और भी बिना महसूल ले जा सकता है, ड्यौढ़े दर्जेवाला ३० सेर, दूसरे दर्जेवाला ४० सेर, और अव्वल दर्जे वाला ६० सेर। इससे अधिक वज़न होने पर उसका महसूल पेशगी ही देना होता है। अन्यथा मार्ग में जाँच होने पर उससे दूना भाड़ा वसूल किया जाता है। यात्रियों को चलती गाड़ी में फाटक खुला नहीं रखना चाहिए। खिड़की पर झुकना तथा सिर बाहर निकालना भी ठीक नहीं है। यदि कोई आदमी अपने पास बैठे हुए यात्रियों की इच्छा के विरुद्ध या उनके मना करने पर भी तम्बाकू पीये तो उस पर जुरमाना हो सकता है। यदि कोई आदमी नशा किया हुआ हो, या अन्य यात्रियों को कष्ट पहुँचाता हो तो उसे दंड दिया जायगा।

चलती गाड़ी में कोई खतरा हो, कोई दुष्ट बदमाशी करे, या भीड़ इतनी अधिक हो कि स्वास्थ्य बिगड़ने की आशंका हो, तो जंजीर खींच लेनी चाहिए। इस पर जब गाड़ी रुक जाय तो गार्ड को सब बात कह देनी चाहिए। अत्यन्त आवश्यकता बिना जंजीर नहीं खींचनी चाहिए। जब गाड़ी स्टेशन पर ठहरी हो, यदि उस समय गाड़ी में बैठे हुए किसी आदमी के बारे में कुछ शिकायत करनी हो तो स्टेशन-

मास्टर से शिकायत करनी चाहिए।

कुछ रेलवे लाइनों पर ख़ास-ख़ास दिनों में; या विशेष त्योहारों आदि के अवसर पर वापसी टिकट दिये जाते हैं। इनके मूल्य में कुछ रियायत रहती है, उदाहरणवत् यदि कहीं जाने और वहाँ से लौटने का किराया बारह-बारह आने हो तो वापसी टिकट लगभग एक रुपये में ही मिल जायगा। कुछ रेलवे लाइनें चार या अधिक विद्यार्थियों या खेलनेवालों से इकट्ठा टिकट लेने पर कुछ इसी प्रकार की रियायत करती है। ऐसी यात्रा के टिकट 'कन्सेशन टिकट' या रियायती टिकट कहलाते हैं। ऐसे टिकटवालों को निर्धारित अवधि के अन्दर वापिस अपने स्थान पर आजाना चाहिए।

साधारण सवारी गाड़ियों के अतिरिक्त एक्सप्रेस या डाकगाड़ी से भी यात्रा होती है। प्रायः इनके तीसरे दर्जे के टिकट का मूल्य सवारी गाड़ी के तीसरे दर्जे के टिकट से कुछ अधिक रहता है। गाड़ी या उसका डिब्बा 'रिज़र्व' भी कराया जा सकता है, उसमें वही आदमी बैठते हैं जिनके लिए वह रिज़र्व कराया जाता है। रिज़र्व कराने के लिए २४ घंटे पहले रेलवे ट्रैफिक मेनेजर के पास दर्ख़ास्त दी जाती है।

रेलगाड़ी से सामान या माल भी भेजा जाता है। बड़े बड़े पार्सल डाक से भेजने में बहुत ख़र्च पड़ता है, उन्हें सवारी गाड़ी से भेजने में बहुत किफ़ायत होती है। अगर बहुत जल्दी का काम न हो तो माल-गाड़ी से भेजा जा सकता है। इसमें किराया और भी कम लगता है, हाँ, इसमें माल सवारी गाड़ी की अपेक्षा देर में पहुँचता है। यह बात माल भेजनेवाले की इच्छा पर निर्भर है कि वह माल का रेल-किराया

स्वयं दे या उसके चुकाने का भार माल पानेवाले पर डाले। माल भेजनेवाले को रेलवे रसीद मिलती है, जिसे 'बिल्टी' कहते हैं। यह बिल्टी वह डाक से भेजता है सादे लिफाफे में, बैरंग, रजिस्टरी या वी० पी० से। बिल्टी पानेवाला इसे दिखाकर अपना माल ले सकता है। अगर इसका महसूल पहले नहीं चुकाया गया है तो उसे महसूल चुकाना होता है। जिस समय माल स्टेशन पर पहुँचे, उसके ४८ घन्टे के भीतर उसे छुड़ा लिया जाना चाहिए। देरी करने से 'डेमरेज' या हरजाना देना पड़ता है। सवारी गाड़ी के पार्सलों पर डेमरेज प्रतिदिन दो आना लगता है। मालगाड़ी से आने वाले माल पर डेमरेज वज़न के अनुसार लिया जाता है।

यदि किसी रेलवे कर्मचारी के बारे में, या रेल सम्बन्धी कोई अन्य शिकायत करनी हो तो रेलवे ट्रैफिक मेनेजर के पास करनी चाहिए।

मोटर—यह तो बताया ही जा चुका है कि मोटरों का प्रचार क्रमशः बढ़ रहा है। पहले इन्हें धनवान लोग अपने निजी काम के लिए रखा करते थे। वे ही इनमें सवार होते थे, परन्तु अब तो ये किराये पर भी चलने लगी हैं। और, यह भी एक रोज़गार हो गया है। मोटरों द्वारा लोगों की यात्रा ही नहीं होती, सामान भी ढोया जाता है। प्रायः इनमें महसूल या किराये की दर रेल के बराबर ही रहती है। इनमें लोगों को यह सुभीता रहता है कि अपने शहर से बैठ गये और दूसरे शहर के पास हो जा उतरे, अर्थात्, उन्हें रेलवे स्टेशन तक (जो प्रायः बस्ती से दूर होते हैं) जाना आना नहीं पड़ता। अभी रेलों का प्रचार बहुत

कम है। गांवों का तो कहना ही क्या, अनेक नगर और क़स्बे ऐसे हैं, जहां रेल नहीं पहुंचती; वे कहीं-कहीं रेलवे स्टेशनों से दर्जनों ही नहीं सैकड़ों मील दूर हैं। ऐसे स्थानों में, यदि सड़कें ठीक हों, तो, मोटरों से अच्छी तरह काम लिया जा सकता है। जिन स्थानों में रेल जाती है, वहां भी बहुधा आमदरफ़्त बढ़जाने के कारण मोटरें खूब चलती हैं। उदाहरणतः देहली से आगरा, अलीगढ़, मथुरा, बुलन्दशहर, रोहतक, मेरठ, रिवाड़ी आदि को नित्य बहुतसी मोटरें जाती हैं।

मोटर चलाने के लिए सरकारी लैसेंस (अनुमति) लेना आवश्यक है। मोटर चलानेवाला सिर्फ़ उन्हीं सड़कों या रास्तों पर अपनी मोटर ले जा सकता है, जहां के लिए उसने लैसेंस ले रखा हो। प्रत्येक मोटर में बैठनेवालों की संख्या निश्चित की हुई रहती है। उससे अधिक बैठाने पर मोटरवाले को दंड होता है। सरकार की ओर से इस बात की व्यवस्था रहती है कि मोटर चलानेवाले मोटर सम्बन्धी नियमों का यथोचित पालन करें।

दसवाँ पाठ

शिक्षा

पाठको ! तुम इस पुस्तक में पुलिस, अदालतों और जेलों का हाल पढ़ चुके हो। देश की शान्ति के लिए इनकी बहुत ज़रूरत है। परन्तु,

देश की उन्नति के लिए यह भी आवश्यक है कि लोगों में विविध विषयों के ज्ञान का प्रचार हो। इस वास्ते स्थान-स्थान पर लड़के और लड़कियों के लिए स्कूल आदि होने चाहिएँ, जिनमें शिक्षा पाकर वे न केवल लिखना-पढ़ना सीखें, वरन् ईमानदारी से अपना निर्वाह भी करने लग जांय; वे अपनी मानसिक और शारीरिक उन्नति के साथ, नैतिक उन्नति भी कर सकें; वे अपने कर्तव्यों को समझें, और एक-दूसरे के साथ मिलकर, सहानुभूति और सहयोग का भाव रखते हुए रहा करें। ऐसी शिक्षा पाये हुए आदमी चोरी या लूट मार आदि नहीं करते। वे देश की सुख-शांति में सहायक होते हैं, और सुयोग्य नागरिक बन जाते हैं। कहा है, कि एक स्कूल को खोलना कई जेलों को बन्द करना है।

प्राचीन काल में भरतवर्ष अपने ज्ञान-भंडार के लिए प्रसिद्ध रहा है। यहां प्रत्येक ग्राम में ऐसी पाठशालाएं थीं, जिनमें जन–साधारण के बालक बिना कुछ खर्च किये, अपने गुरू के पास रहते और शिक्षा पाते थे। परन्तु इस समय यहाँ शिक्षित व्यक्ति बहुत कम हैं; सब स्त्री पुरुष मिलाकर केवल दस फी सदी ही कुछ पढ़ना-लिखना जानते हैं।

आधुनिक शिक्षा—आज कल यहाँ अधिकतर शिक्षा कार्य पर सरकारी देख-रेख है। आधुनिक शिक्षा संस्थाओं के मुख्य भेद निम्नलिखित हैं:—

१—प्राइमरी स्कूल।

२—सैकिंडरी या माध्यमिक स्कूल।

३—कालिज या महाविद्यालय।

४—उद्योग धन्धों के स्कूल और कालिज।

अब हम इन संस्थाओं में मिलनेवाली शिक्षा के विषय में कुछ मुख्य-मुख्य बातें बतलाते हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा—प्राइमरी स्कूल बहुतसे बड़े-बड़े गांवों तथा सब शहरों में हैं। इनमें हिन्दी, बंगला, मराठी, आदि देशी भाषाओं में लिखना-पढ़ना तथा कुछ भूगोल और हिसाब सिखाया जाता है। इनकी पढ़ाई प्रायः चार वर्ष की होती हैं। तुम्हारे ग्राम या नगर में ये स्कूल होंगे, तुम इनकी शिक्षा पा चुके हो, इसलिए इनका हाल तुम्हें ज्ञात ही होगा। यह और जान लेना चाहिए कि गाँव के प्राइमरी स्कूल ज़िला-बोर्ड (या ज़िला-कौंसिल) के खर्च से, और, शहरों के स्कूल म्युनिसपैलटियों के खर्च से चलते हैं। कुछ शहरों में म्युनिस-पैलटियों ने अपने-अपने नगर के सब या कुछ मोहल्लों के लड़कों के लिए यह नियम कर दिया है कि वे प्रायः छः वर्ष की उम्र से लेकर दस वर्ष की उम्र तक अवश्य ही पढ़ें। यदि उन स्थानों के ऐसी उम्र के बालक पढ़ने न जायँ तो उनके माता-पिता आदि को चेतावनी दी जाती है, अथवा, कुछ दशाओं में उन पर जुरमाना भी होता है। जहां ऐसा नियम होता है, वहां शिक्षा 'अनिवार्य' कही जाती है। और, ऐसा नियम तभी किया जाता है, जब पढ़नेवाले को कुछ फीस देनी न पड़े; क्योंकि, बहुतसे आदमी फीस का भार नहीं सह सकते। भारतवर्ष के देहातों में शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क नहीं हुई है। यहां तो शहरों में भी यह काम होना, अभी बहुत कुछ शेष है।

माध्यमिक शिक्षा—प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई कर चुकने पर

विद्यार्थी वर्नाक्यूलर मिडल स्कूल में दाखिल हो सकता है। उसकी पढ़ाई समाप्त करके, तथा अंगरेज़ी मिडिल क्लास, की अंगरेज़ी की पढ़ाई पूरा करके 'हाई स्कूल' में प्रवेश कर सकता है। अथवा, यदि विद्यार्थी चाहे तो वह प्राइमरी क्लास पास करके अंगरेज़ी मिडिल स्कूल में जा सकता है, और उसकी शिक्षा पूरी करके फिर हाई स्कूल में प्रवेश कर सकता है। हाई स्कूलों में शिक्षा प्रायः देशी भाषाओं द्वारा दी जाती है। हाई स्कूल की अन्तिम परीक्षा को एंट्रेंस, मेट्रीक्यूलेशन, स्कूल-लीविंग, या 'हाई-स्कूल सर्टीफिकट' परीक्षा कहते हैं। यदि विद्यार्थी लगातार पास होता रहे तो उसको आरम्भ से इस परीक्षा तक दस ग्यारह वर्ष लगते हैं। कुछ प्रान्तों में मिडल और हाई स्कूल की शिक्षा का क्रम निश्चित करने, और इनकी अन्तिम परीक्षा लेने का प्रबन्ध करने के लिए हाई-स्कूल बोर्ड बनाये गये हैं।*

उच्च शिक्षा—हाई स्कूल की अन्तिम परीक्षा पास कर चुकनेवाले विद्यार्थियों के लिए कालिजों में उच्च शिक्षा का प्रबन्ध किया गया है। कालिज में पढ़ानेवाले को 'प्रोफेसर' कहते हैं। कालिज की दो वर्ष की पढ़ाई पूरी करने पर, एफ. ए. (या इंटरमीजियट) की परीक्षा होती है। चार वर्ष की पढ़ाई पूरी करने पर बी. ए. की परीक्षा होती है। बी. ए. पास को 'ग्रेजुएट' कहते हैं। इसके दो वर्ष बाद की परीक्षा

*कुछ स्थानों में हाई स्कूल की अन्तिम दो, तथा कालिजों की प्रथम दो श्रेणियों की शिक्षा के लिए इन्टरमीजियट कालिज खोले गये हैं। इनका शिक्षा-क्रम निश्चित करने, और परीक्षा का प्रबन्ध करने का कार्य 'हाई स्कूल और इन्टरमीजियट शिक्षा-बोर्ड' करता है।

पास करनेवाले एम. ए. हो जाते हैं। उच्च शिक्षा अभी तक प्रायः अंगरेज़ी द्वारा ही दी जाती है। हां, कुछ स्थानों में देशी भाषाओं की भी उच्च परीक्षा होती है।

उच्च शिक्षा का क्रम निश्चित करने और उसकी परीक्षा लेने का प्रबन्ध विश्वविद्यालय या 'यूनिवर्सिटियां, करती हैं। भारतवर्ष में सब मिला कर अठारह विश्वविद्यालय हैं। इन में पांच तो संयुक्तप्रान्त में ही हैं, इलाहाबाद, बनारस, आगरा, लखनऊ, और अलीगढ़ में। मध्यप्रान्त का विश्वविद्यालय नागपुर में, बिहार का पटना में, और पंजाब का लाहौर में है।

स्त्री शिक्षा—स्त्री शिक्षा का प्रचार क्रमशः बढ़ता जा रहा है। परन्तु पढ़नेवाली कन्याओं में से अधिकांश प्राइमरी शिक्षा ही प्राप्त करती हैं। बाल विवाह तथा पर्दे की सामाजिक कुरीतियाँ उन की उच्च शिक्षा-प्राप्ति में बाधा डालती हैं; इन में क्रमशः सुधार हो रहा है। गांवों में, और कहीं-कहीं नगरों में भी, कन्याएं लड़कों के साथ ही पढ़ती हैं। पाठको! तुम ने कुछ शिक्षा पायी है तो तुम शिक्षा के लाभ भी समझते होगे, जो हमने संक्षेप में इस पाठ के आरम्भ में बताये हैं। क्या तुम देश में स्त्री शिक्षा के बढ़ाने का प्रयत्न न करोगे? तुम्हारे कोई सगी या रिश्ते में बहिन भतीजी आदि हो, तो उसे पढ़ने के लिए उत्साहित करना तुम्हारा कर्तव्य है। इस कर्तव्य के पालन करने से तुम स्त्री-शिक्षा के प्रचार में कुछ-न-कुछ सहायक हो सकते हो।

कृषि शिक्षा—भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। बहुतसे आदमियों की आजीविका का मुख्य साधन यही है। इसलिए इस विषय की भी

शिक्षा के बारे में कुछ बातें जान लेनी चाहिएँ। यहां कानपुर, नागपुर लायलपुर (पंजाब) और पूसा (बिहार) आदि में कृषि कालिज हैं। उन के साथ कृषि विज्ञान-शाला (तथा पशुशाला) हैं। उन में अनुभव प्राप्त करने के लिए खेती के प्रयोग किये जाते हैं, जिससे नयी-नयी खोज हो, और खेती के रोग दूर करने के उपाय मालूम हों। कृषि-कालिजों में शिक्षा अङ्गरेज़ी भाषा द्वारा दी जाती है; यदि देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा दी जाय तो उनसे अधिक लाभ हो। भारतवर्ष में कुछ स्कूलों में कृषि-विद्या पाठ्य विषय हैं; जहां तहां कुछ कृषि-विद्यालय भी हैं। इनमें साधारण शिक्षा के अतिरिक्त कृषि के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है, तथा इस विषय का व्यावहारिक अनुभव भी कराया जाता है।

उद्योग-धन्धों की शिक्षा—पाठको! क्या तुमने कभी यह विचार किया है कि तुम बड़े होकर क्या काम धन्धा करोगे? सम्भव है, तुम में कुछ कहीं नौकरी करें। परन्तु देश में नौकरियों की एक सीमा है। सब पढ़े-लिखों को नौकरी नहीं मिल सकती। और, आजीविका के लिए कोई दूसरा काम अच्छी तरह और आसानी से तभी किया जा सकता है, जब उस के लिए पहले से कुछ शिक्षा मिली हो। भारतवर्ष में इस शिक्षा का प्रबन्ध बहुत ही कम है। केवल थोड़ेसे ही नगरों में सरकार की तरफ़ से 'आर्ट स्कूल' खुले हुए हैं, जिनमें दस्तकारी, धातु का काम, ज़ेवर बनाना, जवाहरात का काम, कपड़े और दरी बुनना, मिस्तरी का काम, मिट्टी के खिलौने बनाना, चित्रकारी, रंगसाज़ी, मूर्ति बनाना, तथा लोहे आदि

का काम सिखाया जाता है। शिल्प-विद्यालयों में अधिकांश लुहार बढ़ई और दर्ज़ी का काम सिखाया जाता है।

कुछ स्थानों में व्यापारिक शिक्षा भी दी जाती है। कई प्रान्तों के अंगरेज़ी स्कूलों की परीक्षा में चित्रकारी, कृषि, 'बुककीपिंग' (अंगरेज़ी ढङ्ग का बहीखाता), 'शोर्टहैंड' (संक्षिप्त लेखप्रणाली) और टाइप करना आदि सिखाया जाता है।

कुछ बड़े-बड़े नगरों में 'मेडीकल' अर्थात् चिकित्सा सम्बन्धी, तथा क़ानून की, शिक्षा के लिए कालिज खुले हुए हैं जिनसे डाक्टर और वकील आदि निकलते हैं। अध्यापक का कार्य सीखने के लिए नार्मल स्कूल, तथा ट्रेनिंग स्कूल और ट्रेनिंग कालिज आदि हैं।

शिक्षा विभाग—पाठको! अगर तुम किसी सरकारी स्कूल में पढ़े हो तो तुमने देखा होगा कि समय-समय पर उसका निरीक्षण करने के लिए एक अफ़सर आता है। उसे साधारण बोलचाल में डिप्टी साहब या इन्सपेक्टर साहब कह देते हैं। वास्तव में उसके पद का नाम 'डिप्टी इन्सपेक्टर' होता है। 'डिप्टी' का अर्थ सहायक, प्रतिनिधि या अधीन है; और इन्सपेक्टर का अर्थ है जांच करनेवाला, या निरीक्षक। डिप्टी इन्सपेक्टर एक या अधिक सब-डिप्टी-इन्सपेक्टरों की सहायता से ज़िले के स्कूलों का निरीक्षण करता है। इसे ज़िला-इन्सपेक्टर भी कहते हैं। एक डिविज़न में कई ज़िला-इन्सपेक्टर होते हैं। डिविज़न या सर्कल भर के मुख्य अफ़सर को 'इन्सपेक्टर' कहते हैं, उसके कुछ सहायक होते हैं, उन्हें 'एसिस्टेंट इन्सपेक्टर' कहते हैं। इन्सपेक्टरों से ऊपर 'डायरेक्टर' होता है, जो

एक प्रान्त के शिक्षा विभाग की देख-रेख करता है।

शिक्षा विभाग के नियम के अनुसार पढ़ाई करानेवाली और उसके कर्मचारियों द्वारा निरीक्षण करवानेवाली सरकारी, तथा म्युनिसिपल और ज़िला-बोर्डों की संस्थाएँ 'पब्लिक' या सार्वजनिक कहलाती हैं। इन्हें छोड़कर आर्यसमाज, ईसाइयों तथा अन्य विशेष सम्प्रदायों की संस्थाओं को 'प्राईवेट' कहते हैं। इनमें प्रायः धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है। बहुतसी 'प्राइवेट' संस्थाएँ सरकारी सहायता लेती हैं। उन्हें अपना पाठ्यक्रम निश्चित करने, अपने मकान आदि बनवाने में सरकारी नियमों का पालन करना होता है। सरकारी इन्स्पेक्टर समय-समय पर उनका निरीक्षण करते हैं।

ग़ैर-सरकारी और राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाएँ—कुछ स्थानों में गुरुकुल, ऋषिकुल, और विद्यापीठ आदि प्राचीन ढङ्ग की संस्थाएँ हैं, ये ग़ैर-सरकारी हैं, और इनमें प्रायः राष्ट्रीय शिक्षा दी जाती है। इनके अतिरिक्त आधुनिक ढङ्ग की राष्ट्रीय संस्थाएँ भी कहीं-कहीं काम कर रही हैं। हिन्दी भाषा में विविध परीक्षाएँ लेनेवाली संस्थाओं में हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) अच्छा काम कर रहा है; इसकी परीक्षाओं के लिए देश भर में विविध केन्द्र स्थापित हैं। सेवाकार्य की शिक्षा देने के लिए कुछ स्थानों में बालचर संघ और सेवा-समितियाँ आदि स्थापित हैं; इनके विषय में आगे लिखा जायगा।

ग्यारहवाँ पाठ

कृषि और सिंचाई

पाठको ! यह तो तुम जानते ही हो कि भारतवर्ष में अधिकतर आदमी गांवों में रहते हैं, और उनमें से बहुतसों के लिए खेती का ही धंधा मुख्य है। वे या तो खेती करते हैं, या खेती करनेवालों के काम में किसी-न-किसी प्रकार की सहायता करते हैं। हिसाब लगाने से मालूम हुआ है कि कुल मिलाकर उनतीस करोड़, अर्थात् सौ पीछे तेहत्तर आदमियों की आजीविका खेती से ही चलती है। सरकार को भी खेती से बहुत लाभ है। सेना, पुलिस, अदालतें, जेल और स्कूल आदि के लिए बहुत ख़र्च की ज़रूरत होती है; उन विभागों से आमदनी बहुत कम होती है। परन्तु खेती से तो ख़र्च काटकर भी, सरकार को बड़ी बचत होती है। और, इस बचत से सरकार के अन्य विभागों का काम चलता है। वास्तव में प्रत्येक प्रान्त की सरकार के लिए आमदनी की सबसे बड़ी मद खेती की मालगुज़ारी है। इसलिए प्रजा तथा सरकार दोनों की दृष्टि से खेती की उन्नति बहुत आवश्यक तथा लाभकारी है।

भारतवर्ष में कृषि की अवनति के कारण—भारतवर्ष में

अधिकतर खेती की दशा अच्छी नहीं है। भारतवर्ष की जन-संख्या तथा क्षेत्रफल को देखते हुए, यहाँ की पैदावार बहुत कम है। अन्य देशों की तुलना में, फ़ी आदमी, अथवा फ़ी एकड़ भूमि, यहाँ खेती की उपज में बड़ी कमी है।

इसके मुख्य कारण, किसानों की दरिद्रता तथा अज्ञान हैं। उनके पास प्रायः इतनी पूंजी नहीं होती कि वे नये यंत्र, बढ़िया खाद, उत्तम बीज आदि ख़रीदकर काम में ला सकें, अथवा खेतों में पानी देने के लिए कूएँ आदि जितने चाहिएँ, खुदवा सकें। भारतवर्ष में खेती पशुओं की सहायता से होती है; अन्य देशों की तरह यहाँ मशीनों तथा वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग नहीं किया जाता। इसलिए यहां पशुओं की रक्षा, उन्नति, और चिकित्सा आदि की विशेष आवश्यकता है। इन बातों का यथेष्ट प्रबन्ध न होने से भी यहां खेती अवनत अवस्था में है। इसके अलावा इस देश के अनेक स्थानों में एक आदमी की थोड़ीसी ज़मीन यहाँ है और थोड़ीसी बहुत दूर जाकर है। इससे उनमें खेती करना, तथा उनकी देख-रेख करना, बहुत कठिन हो जाता है, और, खर्च भी अधिक पड़ता है। किसानों तथा ज़मींदारों को चाहिए कि सरकार की सहायता से कृषि सम्बन्धी उपर्युक्त असुविधाओं को दूर करने का यत्न करें। सहकारी समितियों से भी बहुत लाभ उठाया जा सकता है, इनके सम्बन्ध में आगे सोलहवें पाठ में लिखा है।

कृषि-विभाग—कृषि की उन्नति के लिए भारतवर्ष में एक सरकारी कृषि संस्था है। अलग-अलग प्रान्तों में मन्त्री के

अधीन खेती का डायरेक्टर तथा उसके नीचे डिप्टी-डायरेक्टर, एसिस्टेंट डायरेक्टर, इन्स्पेक्टर और इंजिनियर आदि रहते हैं। कृषि-विभाग के अफ़सरों के प्रयत्नों से कृषि के सम्बन्ध में—विशेषतया भिन्न-भिन्न प्रकार की ज़मीनों में उचित खादों के उपयोग; अच्छे बीज, पौदों के रोग और उनके निवारण, नयी तरह के औज़ारों के उपयोग, और नये तरीक़ों से खेती करने के सम्बन्ध में—कई उत्तम बातों का ज्ञान प्राप्त हो चुका है। हां, सर्व-साधारण में अभी तक इस ज्ञान का यथेष्ट प्रचार नहीं हुआ, कारण, उन्हें अंग्रेज़ी तो क्या देशी भाषा भी पढ़नी नहीं आती। उनमें शिक्षा का प्रचार बहुत कम है, और जबतक सरकारी कर्मचारी उन्हें इस विषय को भली भांति समझाने तथा उनकी शंकाओं को निवारण करने का विशेष रूप से उद्योग न करें, केवल सरकारी फ़ार्मों या नुमायशों से किसानों को काफ़ी लाभ नहीं होता।

किसानों को आर्थिक सहायता—कृषि सम्बन्धी बहुतसे सुधार ऐसे हैं, जिनकी उपयोगिता किसानों की समझ में अच्छी तरह आजाने पर भी, वे उनसे समुचित लाभ इसलिए नहीं उठा सकते कि वे प्रायः बहुत ग़रीब और ऋण-ग्रस्त हैं। किसानों को साहूकारों से बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार मिलता है। सरकार उन्हें भूमि की उन्नति करने, और पशु, बीज तथा कृषि सम्बन्धी अन्य वस्तुओं को ख़रीदने के लिए कम सूद पर रुपया उधार देती है। इसे 'तक़ावी' कहते हैं। बहुतसे किसानों को अपनी अनेक आवश्यकताओं के लिए बहुधा काफ़ी 'तकावी' नहीं मिल सकती। सहकारी साख-

समितियों से उन्हें बहुत लाभ पहुँच सकता है। इनके विषय में आगे लिखा जायगा। वर्तमान अवस्था में, प्रायः किसानों को सरकारी लगान देने के लिए ही, अपनी उपज का बड़ा भाग बेच देना होता है। बेचने में जल्दी करने के कारण, उसके दाम अच्छे नहीं उठते। किसानों की आर्थिक उन्नति करने के लिए इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि लगान की दर में काफ़ी कमी की जाय।

सिंचाई की आवश्यकता—ऊपर बताया गया है कि यहां प्रायः किसानों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं। इस पर जब बारिश बहुत कम, या बहुत ज्यादह होती है, तो फ़सल ख़राब होजाने से उनका कष्ट और भी बढ़ जाता है। साधारणतया उत्तरी पंजाब, संयुक्तप्रान्त, और मदरास प्रान्त के तट की भूमि में वर्षा कुछ निश्चित नहीं है; और दक्षिण मालवा, गुजरात, सिंध और राजपूताने में वर्षा बहुत कम होती है। इन भागों में खेती करने के लिए सिंचाई (आबपाशी) की विशेष आवश्यकता है।

भारतवर्ष में सिंचाई के तीन साधन हैं; कुएँ, तालाब और नहरें। कुएँ यहां प्राचीन काल से रहे हैं, और अधिकतर लोगों के ही बनवाये हुए हैं; कभी-कभी सरकार भी इनके खुदवाने में सहायता देती है। तालाब भी यहां पुराने समय से हैं। इनके बनाने का तरीक़ा यह है कि बहते हुए पानी को एक सुभीते की जगह रोककर उसके चारों तरफ़ मेंड़ (किनारा) बना दी जाती है। मदरास में तालाब बहुत हैं; कुछ सरकार के बनवाये हुये हैं, और, कुछ लोगों के। कुछ तालाबों का घेरा तो कई-कई मील का है। बंगाल, और बिहार में

भी तालाबों से आबपाशी का बहुत काम लिया जाता है।

नहरें भी यहां पहले से हैं। हां, अंगरेज़ी अमलदारी में इनकी अच्छी उन्नति हुई, तथा हो रही है। वर्तमान नहरें प्रायः सरकार की बनायी हुई, और उसी के प्रबन्ध में हैं। यह सिंचाई का सबसे बड़ा साधन हैं। नहरें निकल जाने पर बंजर भूमि भी बहुत सुहावनी, हरी भरी, तथा खूब आबाद हो जाती है; उदाहरण के लिए पंजाब में नहरें निकलने से कई जगह अच्छी सुन्दर नहरी बस्तियां ('कालोनी') हो गयी हैं। वहां पैदावार तथा आबादी पहले से कई गुनी हो गयी है।

भारतवर्ष में कुल मिलाकर लगभग पचीस करोड़ एकड़ भूमि जोती जाती है। इसमें से इस समय केवल पांचवें हिस्से में सिंचाई होती है, शेष भूमि का आसरा एकमात्र वर्षा है। नहरों के काम में धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है, परन्तु अभी उनकी आवश्यकता बहुत अधिक है।

सिंचाई का महसूल—सिंचाई का महसूल भिन्न-भिन्न प्रान्तों में अलग-अलग हिसाब से वसूल किया जाता है। एक प्रान्त में भी सब फ़सलों के लिए, यह महसूल बराबर नहीं होता, किसी के लिए कम होता है, और किसी के लिए ज्यादह। कहीं-कहीं तो यह महसूल लगान के साथ ही, और, कहीं-कहीं अलग, लिया जाता है।

सिंचाई विभाग—सिंचाई का प्रबन्ध करने के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक सरकारी विभाग है, उसे सिंचाई विभाग ('इर्रीगेशन डिपार्टमेन्ट) कहते हैं। इस विभाग का प्रधान प्रान्तीय अधिकारी 'चीफ़ इंजिनियर' कहलाता है। उसके अधीन एक-एक 'सर्कल' के

'सुपरिंटैंडिंग इंजिनियर' और उनसे नीचे एक-एक डिविज़न के 'एग्ज़ीक्यूटिव इंजिनियर' होते हैं। एग्ज़ीक्यूटिव इंजिनियर के नीचे क्रमशः एसिस्टेन्ट इंजिनियर, और ओवरसियर आदि कर्मचारी काम करते हैं।

बारहवाँ पाठ

सरकारी निर्माण कार्य

पाठको! तुमने आगरे का ताजमहल, देहली की कुतबमीनार, या इलाहाबाद का किला देखा होगा। और नहीं तो ऐसी इमारतों का नाम तो सुना ही होगा। ये इमारतें किसकी हैं। ये बादशाहों या राजाओं ने बनवायी हैं। ऐसी इमारतों के बनवाने में दो बातों का ध्यान रखा जाता है, या तो यह कि वे बहुत सुन्दर हों, अथवा वे बहुत उपयोगी हों। प्राचीन काल में सौंदर्य का विशेष ध्यान रखा जाता था, आज कल उपयोगिता का अधिक विचार किया जाता है।

पिछले पाठों में यह बताया जा चुका है कि अन्यान्य देशों की भाँति, भारतवर्ष में सरकार के बहुतसे विभाग तथा कार्य हैं; यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, आबपाशी, पुलिस, अदालतें और जेल आदि। इनके लिए इमारतें बनवाने की जरूरत होती है। इस कार्य के वास्ते प्रत्येक प्रान्त में सरकार का एक अलग ही विभाग है। इसका नाम है, सरकारी निर्माण-विभाग। इसे अंगरेज़ी में 'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट' कहते हैं; इसका संक्षिप्त है पी. डब्ल्यू. डी.। साधारण बोलचाल में

बहुधा अंगरेज़ी का यह संक्षिप्त नाम ही काम आता है।

इस विभाग का काम—सरकारी निर्म्माण विभाग इस प्रकार के काम करता है:—

(१) सड़कें बनाना तथा उनकी मरम्मत करना।

(२) सरकारी कामों के वास्ते आवश्यक मकान, स्कूल, अस्पताल, जेल, दफ़्तर, अजायबघर, अदालतें, इत्यादि बनाना, और उनकी मरम्मत करना।

(३) सार्वजनिक सुविधा के लिए बन्दरगाह, घाट, पुल आदि बनाना।

(४) आबपाशी के लिए नहरें खोदना।

सड़कें—उपर्युक्त कार्यों में सड़कों का भी उल्लेख हुआ है। नागरिकों के लिए ये कितनी उपयोगी होती हैं, यह बहुधा सहज ही अनुमान नहीं किया जाता। भिन्न भिन्न स्थानों के नागरिकों को आपस में मिलने जुलने के प्रसंग जितने अधिक आते हैं, उतनी ही उनके पारस्परिक व्यवहार तथा व्यापार आदि की वृद्धि होती है, उन्हें एक-दूसरे से अनेक उपयोगी बातों का ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार नागरिकों की आमदरफ़्त के साधनों की वृद्धि अत्यन्त आवश्यक है। जिन दो स्थानों के बीच में अच्छी सड़क नहीं होती, वहां के लोगों को एक दूसरे से मिलने में बहुत असुविधा होती है। भारतवर्ष में सड़कों की दशा अच्छी नहीं है। कुछ थोड़ी सी ही सड़कें पक्की और कुछ ऊँची हैं तथा बारहों महीने खुली रहती हैं। अधिकांश सड़कें कच्ची हैं, उन पर मोटर तो क्या, इक्के, तांगे भी अच्छी तरह नहीं जा सकते, बरसात के दिनों

में तो वे प्रायः बन्द ही हो जाती हैं। अधिकांश सड़कों के बनवाने तथा मरम्मत आदि का काम ज़िला बोर्ड तथा म्युनिसिपैलटियो के हाथ में है, ये ज़िले के सदर-मुकाम तथा कुछ खास खास स्थानों की ही सड़कों का ध्यान रखती हैं—अन्य अधिकांश स्थानों, खासकर गाँवों की सड़कों की ओर विशेष ध्यान नहीं देतीं। अब सरकार सड़कों की ओर अधिक ध्यान देने लगी है। कई सड़कें प्रान्तीय कर दी गयी हैं, उनकी मरम्मत आदि का जो काम म्युनिस-पैलटियों आदि से धनाभाव के कारण अच्छी तरह नहीं होता था, अब प्रान्तीय सरकार कर रही है। गाँवों में भी सड़कों की उन्नति हो रही है, हाँ अभी इस दिशा में बहुत काम करना शेष है।

विभाग का संगठन—प्रत्येक प्रान्त में सरकारी निर्माण विभाग का प्रधान कर्मचारी 'चीफ इञ्जिनियर' कहलाता है। निर्म्माण कार्यों के लिए प्रत्येक प्रान्त कुछ 'सर्कलों' में, तथा हर एक 'सर्कल' पांच छः 'डिवाज़नों' में, बँटा हुआ होता है। 'सर्कल' भर के कार्यों के निरीक्षण करने का अधिकार 'सुपरिन्टेंडिंग इंजिनियर' को होता है, और, डिविज़न एक 'एग्ज़िक्यूटिव इंजिनियर' के सुपुर्द रहता है। इसके नीचे सहायक इंजिनियर, ओवरसियर और सबओवरसियर आदि रहते हैं। इस विभाग में काम करनेवाले बड़े-बड़े अधिकारी प्रायः इङ्गलैंड में शिक्षा पाकर आते हैं। भारतवर्ष में रुड़की, शिवपुर, (बङ्गाल), मदरास, पूना, बम्बई और जबलपुर आदि में इस विषय की शिक्षा के लिए स्कूल खुले हैं।

तेरहवाँ पाठ

उद्योग धन्धे

पाठको ! तुम इस पुस्तक में कृषि का पाठ पढ़ चुके हो। इसमें सन्देह नहीं, कि हमें अन्न, कपास, गन्ना आदि भूमि से उत्पन्न पदार्थों की बहुत आवश्यकता होती है। परन्तु केवल उन चीज़ों से ही हमारा सब काम नहीं चल जाता। हमें ऐसी भी बहुतसी चीज़ों की ज़रूरत होती है, जिनकी खेती नहीं की जाती; जो भूमि से उत्पन्न पदार्थों से, भिन्न-भिन्न प्रकार से बनायी जाती हैं। उदाहरणार्थ हमें पहनने को वस्त्र चाहिएँ। भूमि से कपास पैदा की जा सकती है, परन्तु उससे सूत के कपड़े बनाने का काम और भी करना बाक़ी रहेगा; तब ही हमारी आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है। इसी प्रकार जंगल में वृक्ष पैदा होते हैं, परन्तु उनसे लकड़ी के तख्ते तैयार करने, या गोंद, लाख आदि एकत्र करने का काम और भी करना होता है। तुम शायद यह भी सुनते होगे कि सोना, चांदी या लोहा आदि ज़मीन से निकलता है, परन्तु जिस रूप में वह मिलता है, वह बहुत उपयोगी नहीं होता। उसे बड़ी होशियारी और परिश्रम से साफ़ किया जाता है, तब उसकी आवश्यक चीज़ें बन सकती हैं।

कच्चा और तैयार माल—इससे स्पष्ट है कि भूमि से जो

चीज़ें मिलती हैं, उनमें से बहुतसी को व्यवहार में लाने के लिए हमें तरह तरह के काम करने पड़ने हैं। इन कामों को उद्योग-धन्धे के काम कहते हैं। उद्योग-धन्धों द्वारा 'कच्चे माल' को 'तैयार माल' बनाया जाता है। उदाहरणार्थ रुई, ऊन, तेलहन, लकड़ी, लोहा आदि कच्चा माल है। उद्योग-धन्धों से इनके कपड़े, तेल, कुर्सी, मेज़, औज़ार आदि बनते हैं, जिन्हें तैयार माल कहते हैं।

दस्तकारी—प्राचीन काल में, भारतवर्ष में दस्तकारियों का बहुत प्रचार था। खेती की उपज के अतिरिक्त, लोगों को जिन-जिन चीज़ों की ज़रूरत होती थी, उन्हें भी वे यहीं ही बना लेते थे। उस समय यहाँ से बहुतसा बढ़िया-बढ़िया तैयार माल विदेशों में बिकने जाता था। निस्सन्देह पहले दस्तकारियों के कारण भारतवर्ष का दर्जा अन्य देशों से कहीं ऊँचा था। पर अब वह बात नहीं रही। जब से कल-कारखानों की लहर चली है, भारतवर्ष बहुत पीछे रह गया, अब तो यहाँ बहुतसा माल विदेशों से आता है। यह ठीक है कि हाथ से बनाया हुआ माल, मशीनों से तैयार किये हुए माल का मुक़ाबिला नहीं कर सकता, बहुत महँगा रहता है; तथापि यदि यहाँ के आदमी दस्तकारियों की ओर काफ़ी ध्यान दें, तो उनकी बहुतसी ज़रूरतें यहाँ ही पूरी हो सकती हैं और देश का बहुतसा धन विदेशों को जाने से रुक सकता है।

तुम जानते हो कि यहाँ के किसान बहुत निर्धन हैं, उनके लिए खेती की पैदावार प्रायः काफ़ी नहीं होती। इसके सिवाय खेती का काम साल में हर समय नहीं होता। उन का जो समय खेती से बचता

है, वह बेकार जाता है। यदि वे अपने अवकाश के समय को दस्तकारी में लगावें तो उन के उस समय का भी सदुपयोग हो सकता है, और उन्हें कुछ आमदनी भी हो सकती है। भारतवर्ष में दस्तकारियों के लिए बड़ी सुविधा है। यहाँ हर तरह का कच्चा माल बहुतायत से पैदा होता है। परन्तु हम उस से तैयार माल नहीं बनाते। बहुतसा कच्चा माल विदेशों को भेज दिया जाता है। वहांवाले उसका तैयार माल बनाते हैं, फिर हम अपनी ज़रूरत के लिए उसे, उन से भारी मूल्य पर ख़रीदते हैं। यदि भारतवासी दस्तकारियों और उद्योग-धन्धों की ओर यथेष्ट ध्यान दें तो इस देश को बड़ा लाभ पहुँचे।

भिन्न-भिन्न स्थानों के लिए अलग-अलग दस्तकारियां उपयोगी हो सकती हैं। सूत कातना और कपड़ा बुनना एक ऐसा काम है, जिसकी हर जगह ज़रूरत होती है। यह बहुत आसानी से किया जा सकता है। इसको शुरू करने में, तथा आवश्यकता होने पर इसे छोड़ देने में, कुछ कठिनाई नहीं होती। इसलिए किसानों के वास्ते यह दस्तकारी विशेष रूप से उपयोगी है। सहकारी समितियों का विस्तार होने से देश की दस्तकारियों की बहुत उन्नति हो सकती है। इन समितियों के विषय में आगे लिखा जायगा।

कल-कारखाने—निदान, भारतवर्ष के आदमी दस्तकारियों की तरफ़ अधिक ध्यान दें, तो बहुत लाभ हो। परन्तु इसका यह मतलब नहीं, कि देश में कल-कारखाने बिलकुल हों ही नहीं। अब तो कल कारखानों का ही जमाना है, बड़ी-बड़ी मशीनों द्वारा, खूब बड़े पैमाने पर, भाफ या बिजली आदि की सहायता से, बहुतसी, तरह-तरह की वस्तुएँ

तैयार की जाती हैं। इस ज़माने में मशीनों से बचना बहुत मुश्किल है। हमारी ज़रूरतें बहुत बढ़ गयी हैं। ज़रूरत की चीज़ों में बहुतसी ऐसी हैं, जो मशीनों के बिना तैयार हो नहीं हो सकतीं। इसके अलावा जो चीज़ें तैयार भी हो सकती हैं, वे कल-कारखानों में बनी चीज़ों से कम सुन्दर, और अधिक महँगी पड़ती हैं। निदान, अब हरएक देश में, कुछ बड़े-बड़े कारखानों की ज़रूरत होती है। हां, कारखानों में वही माल बनना चाहिए, जिसकी देशवासियों को वास्तव में ज़रूरत हो और जो हाथ से तैयार न हो सके; भोजन, वस्त्र जैसी रोज़मर्रा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कारखानों की ज़रूरत नहीं। इसके अतिरिक्त कारखानों में फैशन या भोगविलासादि की सामग्री बनवाना भी अनुचित है। अस्तु; भारतवर्ष के भिन्न भिन्न नगरों में लगभग दस हज़ार कारखाने हैं। इनमें करीब सतरह लाख मज़दूर काम करते हैं।

इनसे होनेवाली बुराइयां—कल-कारखानों के मुख्य-मुख्य लाभ ऊपर बताये गये हैं; पर इनसे हानियां भी बहुत हैं। कुछ हानियों को तो तुम पीछे समझ सकोगे। हां, यह तुम अब भी जानते हो कि इनके कारण अब बस्तियां बड़ी घनी हो गयी हैं। धुआं बहुत रहता है। मकानों का किराया बढ़ता ही जाता है। साधारण आमदनीवाले मज़दूरों को बहुत तङ्ग जगह में निर्वाह करना पड़ता है; उसकी आबहवा भी अच्छी नहीं होती। इससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। वे रोगी और दुर्बल हो जाते हैं। सत्सङ्ग न मिलने से वे मद्यपान आदि की बुरी आदतों के शिकार होते हैं। बहुतसे मज़दूरों को बहुत समय

तक अपने घर-गृहस्थी से दूर रहना पड़ता है। उनके बाल-बच्चों की सार-संभार नहीं होती। उनका पारिवारिक सुख बहुत कुछ नष्ट हो जाता है।

श्रमजीवियों और पूँजीपतियों का विरोध—इसके अलावा एक बात और है। कल-कारखानों में यद्यपि श्रम और पूँजी दोनों सहायक होते हैं, परन्तु श्रम करनेवालों और पूँजी लगानेवालों का प्रायः परस्पर में विरोध रहता है। मजदूर सोचते हैं कि हमें अपने काम के बदले जितनी अधिक मजदूरी और सुविधाएँ मिलें, उतना ही अच्छा है। दूसरी ओर कारखानेवाले यह विचारते हैं, कि उन्हें मजदूरों के वेतन आदि में खर्च जितना कम करना पड़े, उतना ही उत्तम है। प्रत्येक अपने स्वार्थ को देखता है, तो परस्पर में विरोध होनेवाला ही ठहरा। दोनों पक्ष सफलता के लिए अपनी शक्ति बढ़ाने का उद्योग करते हैं, और, इसीलिए अपना संगठन करने की फिकर में रहते हैं।

हड़ताल—साधारणतया आदमी सोचते हैं कि जब कोई मजदूर यह समझे कि उसे अधिक घंटे काम करना पड़ता है या वेतन कम मिलता है, या उसकी अन्य शिकायतों पर मालिक ध्यान नहीं देता, तो वह अपना काम छोड़ सकता है। परन्तु, जहां कारखाने में सैकड़ों और हजारों मजदूर काम करते हैं, वहां दो चार, या दस बीस के काम छोड़कर चलेजाने से, कारखाने की कोई हानि नहीं होगी; मालिक पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। इस बात का अनुभव करके, अब मजदूरों ने इकट्ठे मिलकर, मालिक को पहले से सूचना अर्थात् 'नोटिस' देकर एकसाथ काम छोड़ने का ढङ्ग इख्तयार किया

है। इसे हड़ताल करना कहते हैं। हड़ताल के समय अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए, वे पहले से थोड़ी-थोड़ी रकम जमा करके, एक कोष जमा कर लेते हैं; हड़ताल करने पर इस कोष से ही वे अपना काम निकालते हैं। जिनके पास ऐसा कोष नहीं होता, उनकी हड़ताल सफल नहीं हो सकती।

जब मजदूरों की शिकायतें उचित हों, और, मालिक उन पर ध्यान न दें तो उनका हड़ताल करना उचित ही है। परन्तु कभी-कभी उचित हड़ताल भी सफल नहीं होती। इसका कारण यह होता है कि मजदूरों में फूट हो जाती है; कुछ मजदूर, मालिकों से शिकायतें दूर कराने से पहले ही, काम पर जाने को तैयार हो जाते हैं; अथवा, उस नगर के या बाहर के अन्य मजदूर वहां आ जाते हैं। इस विचार से, जो लोग हड़ताल करते हैं, वे कोशिश करते हैं कि अन्य मजदूर उनकी जगह काम करने के लिए न आ सकें। जो आना चाहते हैं, उन्हें वे रोकते हैं, और, उन पर वे कई प्रकार का दबाव डालते हैं। इसमें कई बार बहुत उपद्रव होने की आशङ्का होती है। मजदूरों को चाहिए कि उपद्रव न होने दें, शान्तिमय उपायों से ही सफलता प्राप्त करने का उद्योग करें।

द्वारावरोध—जिस प्रकार मजदूर संगठित होकर हड़ताल द्वारा कारखाने के मालिकों से अपनी वेतनादि की शर्तें पूरी कराना चाहते हैं, उसी प्रकार पूँजीपति अपना संगठन करके 'द्वारावरोध' द्वारा मजदूरों पर विजय पाने का उद्योग करते हैं। द्वारावरोध का अर्थ है, दरवाजा बन्द करना। जब कारखानेवाले समझते हैं कि हम मजदूरों

से कम वेतन पर काम करा सकते हैं, तो वे आपस में सलाह करके मजदूरों को नोटिस दे देते हैं कि अमुक दिन से, तुम्हारी गरज हो तो, इतनी मजदूरी पर, इतने घंटे काम करना, अन्यथा यहां मत आना। यदि मजदूर ये शर्तें नहीं मानते तो मालिक अपने कारखाने का फाटक बन्द करके, उनका आना रोक देता है। मजदूर प्रायः गरीब होते ही हैं, इसके अतिरिक्त यदि उनमें संगठन भी न हो तो उनकी हार निश्चित ही समझनी चाहिए।

विरोध कैसे हटे ?—हड़ताल और द्वारावरोध दोनों आजकल के कारख़ानों के युग में साधारण बात हो गयी हैं। मज़दूरों और पूँजी-पतियों को बराबर यह चिन्ता लगी रहती है, कि कहीं दूसरा पक्ष हमसे अधिक बलवान न हो जाय। प्रत्येक अपने-अपने स्वार्थ की सिद्धि, और दूसरे की पराजय चाहता है। कोई दूसरे की भलाई को नहीं देखता। उधर, हड़ताल हो या द्वारावरोध हो, उससे धनोत्पत्ति का काम तो रुक ही जाता है, इससे देश की बड़ी हानि होती है।

यदि कारख़ाने में जितना लाभ हो, उसका काफ़ी अंश मज़दूरों में बाँट दिया जाय तो मज़दूरों को संतोष हो जाय, और वे पूँजीवालों से विरोध न किया करें। इसी प्रकार यदि कारख़ाने में मज़दूरों की कुछ पूँजी लग जाय तो वे कारख़ाने के काम को, तथा उससे होनेवाले लाभ को, दूसरे का ही न समझ कर, अपना भी समझने लगें तो विरोध का अवसर न आवे। पूँजीपतियों और मज़दूरों का विरोध दूर करने का एक उपाय यह भी है कि सब मज़दूर अपनी ही थोड़ी-थोड़ी पूँजी लगा कर, अपने श्रम से, कारख़ाने को चलावें। इस दशा में कारखाना

मज़दूरों का ही होगा, दूसरा पक्ष होगा ही नहीं, फिर विरोध होगा किससे ? इन उपायों से पूँजी और मज़दूरों का विरोध दूर हो सकता है। सुविधानुसार इनका उपयोग किया जाना चाहिए।

कारख़ानों का क़ानून—अब हम यह बतलाते हैं कि सरकार कल कारखानों की बुराइयां रोकने के लिए क्या करती है, इस विषय में क्या कानून बना हुआ है। भारतवर्ष के कारखानों के कानून की कुछ मुख्य-मुख्य बातें ये हैं:—

जिन कारखानों में मशीन से काम होता हो, और बीस या अधिक आदमी काम करते हों, उनमें यह कानून लागू होता है। किसी मज़दूर से एक सप्ताह में ६० घंटे और एक दिन में ११ घंटे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता। सप्ताह में एक दिन छुट्टी रहनी चाहिए। बारह वर्ष से कम उम्र के बालकों को काम पर नहीं लगाया जा सकता। चौदह वर्ष से कम उम्रवालों से छः घंटे से अधिक श्रम नहीं कराया जा सकता। स्त्रियों तथा लड़कों से रात्रि में काम कराने का निषेध है। मशीन के चारों ओर घेरा या बाड़ रहनी चाहिए। कारखानों में पानी, रोशनी हवा, सफाई आदि का सुप्रबन्ध होना चाहिए।

कानून में उक्त व्यवस्था होने पर भी अधिकांश श्रमियों का स्वास्थ्य खराब रहता है, उनकी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं होती, वे कर्ज़दार रहते हैं। उनके रहने के स्थान साफ, काफी और हवादार नहीं होते। बहुतसे आदमी मद्यपान आदि दुर्व्यसनों में फँसे होते हैं, उनकी तथा उनके बालकों की शिक्षा और चिकित्सा आदि की कोई व्यवस्था नहीं। उनके बुढ़ापे बीमारी या बेकारी में उनके खाने-पीने का प्रबन्ध नहीं

होता। कुछ कारखानेवाले इन बातों की ओर क्रमशः ध्यान दे रहे हैं, अभी और बहुत प्रयत्नों की आवश्यकता है।

ग्राम-उद्योग संघ—दस्तकारियों में बहुतसी ऐसी समस्याएं पैदा नहीं होतीं, जो कल-कारखानों में अवश्य होती हैं। उनका काम करनेवाले अपने परिवार के अन्य आदमियों के साथ रहते हैं, वे मद्यपान और विलासिता से मुक्त रहते हैं। पूँजीपति और मज़दूरों का संघर्ष भी नहीं होता। भारतवर्ष में दस्तकारी का संगठन बहुत कम है। हाँ, सन् १९१५ ई० से अखिल भारतवर्षीय चर्खा संघ हाथ की कताई और बुनाई का कार्य उत्तरोत्तर बढ़ा रहा है। सन् १९३४ ई० से अखिल भारतवर्षीय ग्राम उद्योग संघ भी विविध उद्योगों की उन्नति में लगा हुआ है। इसका प्रधान कार्यालय वर्धा (मध्यप्रान्त) में है।

चौदहवाँ पाठ

व्यापार

पाठको! रेलों का पाठ तुम पढ़ चुके हो; उनसे व्यापार में कैसी सहायता मिलती है, यह तुम जानते हो। प्राचीन काल में रेल नहीं थीं; डाक तार की तरह के, समाचार भेजने के साधन भी नहीं थे। इसलिए, उस समय भिन्न-भिन्न देशों के निवासियों में पारस्परिक सम्बन्ध इतना नहीं था। पहले प्रायः प्रत्येक गांव (या नगर) के

आदमी आवश्यक पदार्थों को वहीं मोल ले लेते थे। यदि कभी किसी ऐसी चीज़ की ज़रूरत होती थी, जो उनके निवास-स्थान में न मिले तो वे उसे बाज़ार या हाट के दिन, पास के दूसरे गांव या नगर से, ले आते थे। जो चीज़ें वहां भी न मिलतीं, वह तीर्थ-यात्रा आदि के समय, भारतवर्ष के ही, दूसरे स्थानों से लायी जाती थीं। प्राचीन काल में, भारतवर्ष का तैयार माल मिश्र और रोम आदि पश्चिमी देशों के बाज़ारों में बहुत जाता था, अब यहां अन्य देशों से बहुतसा सामान आता है। अस्तु, नयी-नयी वैज्ञानिक खोज और आविष्कारों से अब व्यापार में बहुत सुविधा हो गयी है।

व्यापार के साधन—व्यापार के तीन मार्ग हैं – स्थल-मार्ग, जल-मार्ग, और वायु-मार्ग। स्थल-मार्ग में कच्ची पक्की सड़कों पर, ठेलों, गाड़ियों, पशुओं, मोटरों आदि से माल ढोया जाता है। आधुनिक व्यपार-वृद्धि में रेलों से बड़ी सहायता मिल रही है। जल मार्ग में नदियों, नहरों और समुद्रों में नाव, स्टीमर और जहाज़ चलते हैं। युद्ध-काल में, पनडुब्बियों द्वारा, पानी के नीचे-नीचे भी माल ढोया जाता है। वायु-मार्ग से व्यापार थोड़े ही समय से किया जाने लगा है। और हवाई जहाज़ों द्वारा अभी कहीं-कहीं थोड़ा-थोड़ा माल पहुँचाया जाता है, आगे इसमें बहुत उन्नति की सम्भावना है। डाक, तार, टेलीफ़ोन, और बेतार-के-तार द्वारा एक जगह से दूसरी जगह व्यापार सम्बन्धी सम्वाद भेजने का काम बड़ी सुगमता तथा शीघ्रता से हो जाता है, और इससे व्यापार की खूब वृद्धि होती है। डाक से तो छोटे-छोटे पार्सल या पेकेट आदि भी भेजे जाते हैं। व्यापार में जो

लेन-देन होता है, उसमें बैङ्कों से बड़ी सहायता मिलती है, इनके विषय में आगे लिखा जायगा।

व्यापार की वृद्धि के लिए उपर्युक्त सब साधनों की उन्नति होना आवश्यक है। यह काम अधिकतर सरकार के ही करने का होता है। भारतवर्ष में सरकार द्वारा, इसके सम्बन्ध में जो काम हो रहा है, उसका वर्णन पिछले पाठों में हो चुका है। बड़े होने पर तुम्हें अन्य विषयों के सम्बन्ध में भी ज्ञान हो जायगा। हां, बीमे के बारे में कुछ बातें यहां बतायी जाती हैं।

बीमा—डाकख़ाने के पाठ में तुम पढ़ चुके हो, कि चिट्ठियां, पार्सल और हुंडियां आदि भेजते समय उनकी सुरक्षा के लिए कुछ फ़ीस देकर उनका बीमा कराया जा सकता है। फिर उनके खोये जाने का भय नहीं रहता। व्यापार में भी बहुधा बहुत संशय और जोखम रहती है। कहीं कोई जहाज़ डूब न जाय, या उसमें आग न लग जाय, इस विचार से उनका बीमा कराने की व्यवस्था होती है। अगर बीमा किया हुआ कोई जहाज़ डूब जाय, या किसी मकान या कारख़ाने आदि में आग लग जाय, तो उसका बीमा करनेवाली कम्पनियाँ उसके मालिक को उतनी रक़म दे देती हैं, जितने का बीमा कराया गया हो। आग के अतिरिक्त और भी कई तरह बीमा का होता है। ज़िन्दगी का बीमा कराने के विषय में, तुम्हें अगले पाठ में बताया जायगा। आजकल बीमा करना एक रोज़गार है, और बीमा-कम्पनियां इस काम को अपने फ़ायदे के लिए करती हैं।

तोल और माप— व्यापार करने के लिए मुद्रा (रुपए-पैसे),

तथा तोल और माप का ठीक होना आवश्यक है। यदि किसी देश में ये भिन्न भिन्न प्रकार के हों तो वहां के आदमियों को परस्पर में व्यापार करने में बड़ी असुविधा होती है. और अनेक आदमियों को धोखा भी हो सकता है। उक्त तीन वस्तुओं में से मुद्रा का वर्णन तो अगले पाठ में किया जायगा, तोल और माप का विचार यहां किया जाता है।

भारतवर्ष में सार्वजनिक व्यवहार में तोल के लिए सेर काम में लाया जाता है। यद्यपि कहीं-कहीं सेर कुछ कम या ज्यादह वज़न का भी होता है, यहां अधिकतर अस्सी तोले के सेर का ही चलन है। साधारणतया सब चीज़ों का वज़न सेर में किया जाता है। भारी वस्तुएँ मन या पंसेरी आदि में तोली जाती हैं, जिनका सेरों से हिसाब लग सकता है। इसी प्रकार साधारणत: माप के लिए गज़ काम में लाया जाता है। एक गज़, दो हाथ या छत्तीस इंच का होता है। भारतवर्ष बहुत बड़ा देश है; इसलिए भिन्न-भिन्न प्रान्तों में तोल और माप में कुछ-कुछ भिन्नता होनी स्वाभाविक है। तथापि ऊपर बताये हुये 'सेर' और 'गज़' का प्रचार होने से, समस्त देश के व्यापार में बड़ी सुविधा हो गयी है।

व्यापार नीति — विदेशों से व्यापार करने में किस प्रकार की नीति बर्ती जाय, इसका निश्चय सरकार करती है। यह नीति भिन्न-भिन्न समय में तथा भिन्न-भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में बदलती रहती है। कभी कभी किसी देश की सरकार कुछ विदेशी वस्तुओं पर ऐसा कर लगा देती है कि वे इतनी महँगी हो जायँ कि उस देश

में उनकी ख़रीद बिलकुल न हो सके, अथवा बहुत ही कम हो सके, और, इस प्रकार वहां के स्वदेशी उद्योग-धंधों की उन्नति में सहायता पहुँचे। इसे 'संरक्षण' ('प्रोटेक्शन') नीति कहते हैं। इस नीति को व्यवहार में लानेवाली सरकार कभी-कभी अपने देश के कला-कौशल और उद्योग-धंधों की उन्नति के लिए कारख़ानेवालों को पुरस्कार या सहायता भी दे देती है। इसे अंगरेज़ी में 'बाउंटी' कहते हैं। जिन देशों के उद्योग धंधे गिरी हुई हालत में हों, उन्हें संरक्षण नीति से बड़ा लाभ होता है।

जिन देशों में उद्योग-धंधे उन्नत अवस्था में हों, जो विदेशी माल का मुक़ाबिला आसानी से कर सकते हों, वहां सरकार कर लगाने में स्वदेशी या विदेशी वस्तुओं में कोई भेद-भाव नहीं रखती, जैसे अपना माल अन्य देशों को स्वतन्त्रतापूर्वक जाने दिया जाता है, वैसे ही दूसरे देशों का माल अपने देश में बे रोकटोक आने दिया जाता है। इस प्रकार की नीति को 'मुक्त व्यापार' या 'फ्री ट्रेड' नीति कहते हैं। भारतवर्ष के उद्योग धंधे उन्नत अवस्था में नहीं हैं, परन्तु यहां इङ्गलैंड की तरह प्रायः मुक्त व्यापार नीति ही काम में लायी जाती है। इसमें अभी तक विशेषतया यह ध्यान रखा जाता है कि इङ्गलैंड को हानि न पहुँचे। अच्छा, अब तुम समझ गये होगे कि व्यापार नीति के दो भेद हैं, संरक्षण नीति और मुक्त व्यापार नीति। इनके विषय में विशेष बातें तुम पीछे जान सकोगे।

पन्द्रहवाँ पाठ

रुपया-पैसा और बैंक

पाठको ! पिछले पाठ में तुम व्यापार के बारे में कुछ बातें पढ़ चुके हो। क्या तुमने यह विचार किया है, कि व्यापार किया क्यों जाता है ! देखो, तुम्हें भोजन वस्त्र, कागज कलम, मकान आदि बहुत-सी चीजों की जरूरत होती है। ये सब चीज़ें तुम स्वयं नहीं बना सकते। केवल अपनी बनायी वस्तुओं से तुम्हारा काम नहीं चल सकता। तुम्हें कुछ ऐसी वस्तुओं की भी आवश्यकता होती है; जो दूसरों की बनायी हुई हों। ये वस्तुएँ तुम्हें तभी मिल सकती हैं, जब तुम उनके बदले में अपनी चीज दो। समाज में रहनेवालों का इस अदल-बदल के बिना गुजारा नहीं होता।

रुपया-पैसा; विनिमय का माध्यम—पदार्थों का यह अदल-बदल हर जगह और हर समय सुभीते से नहीं हो सकता। सम्भव है, जो वस्तु हम देना चाहें, उसकी दूसरे को जरूरत न हो, अथवा, यदि उसे जरूरत भी हो, तो उसके पास हमारी जरूरत की चीज न हो। उदाहरण के लिए कल्पना करो कि हमारे पास सेर भर गुड़ है, हम उसे देकर नमक लेना चाहते हैं। अब, हमें ऐसे आदमी

की तलाश करनी है जिसे गुड़ की जरूरत हो, और, जिसके पास हमें देने के लिए नमक भी हो। ऐसा आदमी हर समय आसानी से नहीं मिल सकता। यदि किसी आदमी का गुड़ की तो जरूरत है, परन्तु उसके पास नमक नहीं है, और रुई है, तो उससे हमारा काम नहीं चलेगा। यदि हम उससे रुई ले लेंगे, तो हमें ऐसे आदमी को तलाश करना होगा जो हमसे रुई लेले और बदले में हमें नमक दे सके। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चीजों के अदल-बदल में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है। इसे दूर करने के लिए, मुद्रा या रुपये पैसे से काम चलाने की बात सोची गयी। जो वस्तु हमें देनी हो, उसे बेच-कर हम रुपया ले लेते हैं; और फिर, उस रुपये से, जिस चीज की हमें जरूरत होती है, वह माल लेलेते हैं। यदि रुपया न हो, तो माल लेने और देनेवाले आदमियों को बड़ी झंझट रहे। रुपया उनके बीच में, पड़कर, उसे दूर कर देता है। यह एक प्रकार के बिचवई, मध्यस्थ या माध्यम का काम देता है।

माल की खरीद-बेच (क्रय-विक्रय) को 'विनिमय' कहते हैं। विनिमय का अर्थ बदला करना है, परन्तु अब यह शब्द उसी बदले के काम के लिए उपयोग किया जाता है, जहां रुपये से काम लिया जाय। अतः रुपये-पैसे को 'विनिमय का माध्यम' कहा जाता है।

भारतवर्ष में पहले सरकार जन-साधारण से सोना चांदी और ढलाई खर्च लेकर उनके वास्ते सिक्के ढाल देती थी। परन्तु गत पचास वर्ष से यह बात नहीं रही। अब सरकार को जितने सिक्कों के ढालने की आवश्यकता मालूम होती है, उतने वह स्वयं ढालती रहती है।

नोट अर्थात कागज़ी मुद्रा—पाठको! तुमने नोट देखा ही होगा। कभी-कभी तुमने नोट देकर कोई चीज मोल ली होगी, या दूसरों को मोल लेते हुए देखा सुना होगा। नोट एक प्रकार का कागज ही होता है, पर उस कागज में और अन्य साधारण कागज़ों में फरक होता है। नोट पर विशेष प्रकार की सरकारी छाप होती है, उस पर एक खास नम्बर होता है, तथा उसमें यह लिखा रहता है कि सरकार इस बात की प्रतिज्ञा करती है कि वह इस कागज के बदले में उस पर लिखी हुई रकम की देनदार है।* इसलिए उस कागज की इतनी कीमत होती है।

भारतवर्ष में नोट एक, पांच, दस, पचास, सौ, पांच सौ, एक हज़ार या दस हजार रुपये के होते हैं। सौ रुपये, या इससे अधिक, के नोट आदि खराब या गुम हो जायँ तो उनका नम्बर बताने पर, उनका रुपया सरकारी खज़ाने से मिल सकता है। इसलिए इन नोटों के व्यवहार करनेवालों को चाहिए कि इनका नम्बर अपने पास लिख रखें।

यह प्रश्न हो सकता है कि रुपये-पैसे होते हुए, नोट क्यों चलाये जाते हैं। बात यह है कि बड़े व्यापार में सोने-चांदी के बहुतसे सिक्के एक स्थान से, किसी दूसरे, दूर के स्थान पर लेजाने में बड़ी असुविधा प्रतीत होती है। इस असुविधा को दूर करने के लिए लोगों को क्रमशः धातुओं का आधार छोड़कर, कागजी मुद्रा अर्थात् हुंडियों या नोटों से काम निकालने की सूझी। नोट सरकार बनाती है, और हुंडिया

*एक रुपये के नोट पर यह नहीं लिखा होता।

व्यापारी या महाजन लोग, अपने आपस के व्यवहार के लिए चलाते हैं। कागजी मुद्रा वास्तव में सिक्का नहीं है, यह केवल एवजी सिक्का है, जो चलानेवाले के विश्वास या साख पर चलता है। इसे कोई उसी दशा में स्वीकार करता है, जब उसे यह निश्चय होता है कि उसे आवश्यकता होने पर, इसके एवज या बदले में, इस पर लिखे मूल्य के धातु के सिक्के मिल जायँगे।

हुंडियों का चलन तो यहां के व्यापारियों में बहुत समय से है, पर नोटों का चलन अंगरेज़ों के समय में ही हुआ है। हुंडियों की अपेक्षा नोट दूर दूर, तथा बहुत आदमियों में चलते हैं। कारण, कि नोटों को सरकार चलाती है; और सरकार को देश के सब आदमी जानते हैं; सबका उस पर विश्वास होता है, इसलिए कोई उन्हें लेने से इनकार नहीं करता। हां, एक राज्य के नोटों का दूसरे राज्य में कुछ मूल्य नहीं होता। आवश्यकता से अधिक होने पर तो नोट अपने राज्य में भी चलने कठिन होजाते हैं।

बैंक—अब तुम्हें यह भी जान लेना चाहिए कि रुपया-पैसा जमा करके रखने का काम कहां और कैसे हो सकता है, जिससे वह सुरक्षित रहे, उसके चुराये जाने आदि का भय न हो, तथा ज़रूरत होने पर वह मिल भी सके। जो संस्थाएँ लोगों का रुपया जमा करती हैं, और उन्हें आवश्यकतानुसार देती हैं, उन्हें बैंक कहते हैं। बैंकों का नाम तुमने सुना ही होगा। इनसे केवल हमारा जमा किया हुआ रुपया ही नहीं मिलता, वरन् उससे कुछ अधिक मिलता है, कारण कि वे उस रुपये का सूद भी तो देते हैं। पुनः जिन आदमियों

का वहां रुपया जमा न हो, वे भी विश्वास-पात्र होने की दशा में, बैंकों से रुपया उधार ले सकते हैं।

बैंकों का काम—पाठको! सम्भव है, तुम्हारे शहर या गांव में कोई बैंक, या उस की कोई शाखा हो। तुम जानते ही हो कि महाजन लोग बहुधा कोई ज़ेवर आदि गिरवी रखकर, कागज़ लिखवाकर, किसानों या मज़दूरों आदि को ब्याज पर रुपया उधार दिया करते हैं। बैंक भी ऐसा ही करते हैं, परन्तु महाजन केवल उधार देते हैं, वे लेते शायद ही कभी हैं; और, बैंक ब्याज पर रुपया लेते भी रहते हैं। इस प्रकार बैंकों का काम रुपया उधार लेना, उधार देना, हुंडी पुर्ज़े आदि ख़रीदना या बेचना, है। जो लोग अपनी बचत का कुछ और उपयोग नहीं करते, उनसे बैंक कुछ कम सूद पर रुपया उधार ले लेते हैं, और उसे ऐसे आदमियों को कुछ अधिक सूद पर उधार दे देते हैं जिन्हें उनकी आवश्यकता हो। इस प्रकार बैंकों से, जमा करनेवालों, तथा उधार लेनेवालों, दोनों को लाभ होता है।

प्रत्येक बैंक में, रुपया जमा करने तथा उसमें से लेने के कुछ नियम होते हैं। जो रुपया चालू हिसाब में जमा किया जाता है, (अर्थात् जिसे जमा करनेवाला जब चाहे ले सके) उस पर सूद बहुत कम मिलता है, और जो रुपया किसी ख़ास मुद्दत (साल छः महीने) के लिए जमा किया जाता है, उसमें सूद अधिक मिलता है, क्योंकि बैंकवाले उसे किसी स्थायी काम में लगाकर उससे अधिक लाभ उठा सकते हैं।

भारतवर्ष के बैंक—भारतवर्ष में कई प्रकार के बैंक हैं, यथा

रिजर्व बैंक इम्पीरियल बैंक, एक्सचेंज बैंक, 'जोयन्ट स्टाक' या मिश्रित पूंजी के बैंक, सेविंग्स बैंक तथा 'कोआपरेटिव' या सहकारी बैंक। इस पाठ में तुम्हें सेविंग्स बैंकों का हाल बताया जायगा। सहकारी बैंकों के विषय में, अगले पाठ में लिखा जायगा, अन्य प्रकार के बैंकों की बातें तुम्हें पीछे ज्ञात हो जायँगी।

भारतवर्ष में बैंकों की संख्या तथा कार्य धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं, तथापि अभी बैंक बहुत कम हैं। यहां ऐसे बैंकों की बहुत ही ज़रूरत है, जिनका काम ख़ास तौर से खेती तथा शिल्प की उन्नति करना, हो। नागरिकों को इनकी स्थापना तथा प्रचार में सहयोग करना चाहिए।

सेविंग्स बैंक—पाठको! डाक और तार के पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि डाकख़ानों में सेविंग्स बैंक का भी काम होता है, वहाँ आदमी अपनी बचत का रुपया आसानी से जमा कर सकते हैं। सम्भव है, तुम्हें भी कुछ रुपया जमा कराने की इच्छा हो, इसलिए इनके मुख्य नियम यहाँ दिए जाते हैं:—

१—कोई आदमी, अपने नाम से या अपने किसी रिश्तेदार या नौकर आदि के नाम से, अलग-अलग खाता खोल सकता है।

२—नाबालिग़ लड़के भी अपने नाम से रुपया जमा करा सकते हैं; उन्हें रुपया वापिस लेते समय दूसरे आदमी की गवाही या शहादत करानी होती है।

३—एक बार में कम से कम ।) तक जमा किया जा सकता है।

४—कोई मनुष्य एक साल में ७५०) रुपये से अधिक जमा नहीं कर सकता।

५—एक सप्ताह में, सोमवार से लेकर शनिवार तक रुपया केवल एक बार वापिस मिल सकता है; हां, जमा, तुम चाहो तो हर रोज़ भी करा सकते हो।

६—रुपया जमा करानेवालों को एक 'पास बुक' मिलती है, उसमें रुपया जमा करने, या वापिस लेने को तारीख़ आदि का व्यौरा लिखा जाता है। इसे देखकर डाकख़ानेवाले रुपया देते हैं। हर एक 'पास-बुक' का अलग-अलग एक नम्बर होता है। यदि किसी की 'पास-बुक' खोयी जाय तो उसके, यह नम्बर बतलाने पर, तथा १) फ़ीस देने पर उसे दूसरी पास बुक मिल सकती है।

७—जितना रुपया जमा होता है, उस पर प्रति मास दो आने सैकड़ा के हिसाब से सूद दिया जाता है।※ सूद की यह दर समय-समय पर बदलती रहती है। सूद का हिसाब हर साल १५ जून के बाद होता है।

इस विषय की अन्य बातें तुम्हें किसी डाकख़ाने से मालूम हो सकती हैं।

ज़िन्दगी का बीमा—रुपया पैसा जमा करने का एक उपाय अपनी ज़िन्दगी का बीमा कराना भी है। जो आदमी यह बीमा कराना चाहे, उसे चाहिए कि किसी अच्छी बीमा कम्पनी के एजंट से मिलकर सब बातें मालूम करले। उसे निश्चित किये हुए समय पर अपनी किश्त का रुपया देते रहना होगा। एक किश्त साल, छः महीने, तीन महीने, या एक एक महीने की होती है, जैसा आपस में ठहराव हो जाय। सब के लिए किश्त की रकम बराबर नहीं होती;

बीमे की रकम तथा जमा करनेवालों के सुभीते के अनुसार, छोटी-बड़ी होती हैं। जिन लोगों की थोड़ी आमदनी है, वे भी कोशिश करके किस्त के लिए कुछ बचत कर सकते हैं। बीमे की मियाद पूरी होने पर बीमा करानेवाले को, या उसके कुटुम्बवालों को, बीमे की इकट्ठी रकम मिल जाती है। इसके सिवाय उसे, जैसा तय हुआ हो, कुछ मुनाफे या सूद की रकम भी मिलती है।

बैंक में भी तो बचत का रुपया जमा हो सकता है, और उसपर भी सूद मिल सकता है, फिर बीमा कराने में विशेष लाभ क्या है! देखो, बैंक में जमा कराना न कराना तो सदा तुम्हारी इच्छा पर रहता है। मानलो तुमने एक बार कुछ रुपया जमा करा दिया, फिर तुम्हें कोई कहनेवाला नहीं, कि इतने समय में इतना रुपया जरूर जमा कराना ही चाहिए। परन्तु बीमे में यह बात नहीं है। उसमें तो किस्त का समय होने पर तुम्हें जमा कराना ही होगा, नहीं तो पहला जमा किया हुआ रुपया डूबने की शंका रहेगी; इस भय से तुम जैसे बनेगा, उसके लिए बचत करोगे ही।

बीमे में दूसरी विशेषता यह है कि बैंक का रुपया तो तुम चाहे जब वापिस ले सकते हो। इसलिए यह भी सम्भव है कि तुम्हारे पास बड़ी रकम होने ही न पाये। परन्तु बीमे में यह नहीं होता उसमें तो मियाद पूरी होने पर, तुम्हें पूरी रकम मिलेगी।

बीमे से एक लाभ और भी है। बैंक में तो जितना रुपया तुम्हारा जमा होगा, उतना ही तुम लेने के हकदार होगे। परन्तु बीमे में यह बात है कि अगर बीमा करानेवाले की, बीमे की मियाद से पहले

ही मौत हो जाय तो जितने का उसने बीमा कराया हो, वह पूरी रकम उसके बाल-बच्चों को मिलेगी, यह नहीं कि जितना जमा हुआ हो, सिर्फ उतना ही मिले। मानलो किसी ने बीस साल के लिए दो हजार का बीमा कराया तो हर साल उसे सौ रुपये से कुछ कम जमा कराना होगा; अब अगर दो साल में ही उसकी मृत्यु हो जाय तो जमा तो दो सौ रुपये से कम हुआ, पर उसके बाल-बच्चे पूरे दो हजार की रकम, बीमा-कम्पनी से, ले सकेंगे।

सोलहवाँ पाठ

सहकारी समितियां

सहकारिता——पहले बताया जा चुका है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। प्रायः आदमी मिल-जुलकर गांवों या नगरों में रहते हैं। मनुष्यों में पारस्परिक सहयोग या सहकारिता का भाव जितना अधिक होता है, उतना ही वे अधिक उन्नति कर सकते हैं। भारतवर्ष में अति प्राचीन काल से लोगों में इसका व्यवहार है। कुछ गांवों में सब किसान मिलकर एक या दो कोल्हू मोल या किराये पर ले लेते हैं, और बारी-बारी से ईख पेर लेते हैं। कहीं-कहीं कई-कई किसान मिलकर खेती करते हैं, और फ़सल को, अपने श्रम तथा बैलों के उपयोग के हिसाब से, बांट लेते हैं। कहीं-कहीं तालाब

खोदने, सड़क, मंदिर, धर्मशाला आदि बनाने तथा इनकी मरम्मत का काम भी मिलकर किया जाता है। पंचायती मंदिर आदि की प्रथा अभी तक प्रचलित है, उससे भी सहकारिता का परिचय मिलता है।

सहकारी समितियां--पारस्परिक सहयोग या सहकारिता का भाव रखकर जो समितियां बनायी जाती हैं, उन्हें सहकारी समितियां कहा जाता है। अपने निर्वाह तथा उन्नति के लिए हमें विविध वस्तुओं की आवश्यकता होती है, इसलिए वे वस्तुएँ उत्पन्न की जाती है, या बनायी जाती है, यह पहले समझाया जा चुका है। जो लोग वस्तुएँ उत्पन्न करते हैं, या बनाते हैं वे उत्पादक कहे जाते हैं, और जो उनका उपभोग करते हैं, वे उपभोक्ता। उत्पादक और उपभोक्ता ये दोनों समूह अपनी-अपनी सहकारी समिति बनाकर बहुत लाभ उठा सकते हैं। उत्पादक सहकारी समिति का लक्ष्य यह रहता है कि माल पैदा करने में ख़र्च कम-से-कम हो, उसमें हर तरह की किफ़ायत की जाय, और पीछे उसे अच्छे दामों से बेचा जाय, जिससे मुनाफ़ा अधिक से अधिक हो। उपभोक्ता सहकारी समिति का ध्येय यह होता है कि वस्तुओं को कम-से-कम मूल्य में ख़रीदें; जहां कहीं से वे सस्ती मिल सकें, वहां से ही ख़रीदी जायँ, जिससे समिति के सदस्यों को वे यथा-सम्भव कम मूल्य में, किफ़ायत से दी जा सकें। समिति अपने सब सदस्यों के लिए वस्तु ख़रीदती है, इसलिए वह स्वभावतः उन्हें बड़े परिमाण में ख़रीदती है। इकट्ठी लेने से चीज़ों के भाव में कुछ रियायत हो जाती है, दूसरे स्थान से मँगानी हो तो, बड़े परिमाण में होने के कारण, उनका पेकिंग ख़र्च तथा भाड़ा आदि भी औसतन

कम पड़ता है। इस प्रकार उपभोक्ता समिति को, अलग-अलग व्यक्तियों की अपेक्षा, चीज़ें सस्ती पड़ती है, और वे अपने सदस्यों को उन्हें कम मूल्य में, किफ़ायत से दे सकती हैं। उत्पादक और उपभोक्ता दोनों प्रकार की सहकारी समितियां दलालों को हटा देना चाहती हैं।

सहकारिता के सिद्धान्तों का उपयोग अनेक प्रकार से हो सकता है। इसलिए उपर्युक्त दो प्रकार की सहकारी समितियों के अन्तर्गत कई तरह की समितियां होती हैं। उदाहरणवत् कृषि सहकारी समितियां, गृह-निर्माण सहकारी समितियां, दूध सहकारी समितियां, सिंचाई सहकारी समितियां, क्रय सहकारी समितियां, विक्रय सहकारी समितियां। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफ़ाई, ग्राम सुधार आदि चाहे जिस कार्य के लिए सहकारी समितियां बनायी जा सकती हैं। इन विविध समितियों के विषय में व्यौरेवार बातें तुम पीछे जान लोगे; सहकारी साख-समितियों के विषय में आवश्यक बातें तो अभी जान लेनी चाहिएं; इनका जनसाधारण से घनिष्ट सम्बन्ध है।

साख की सहकारी समितियां—पहले बताया जा चुका है कि भारतवर्ष में अधिकतर जनता किसानों की है, और, ये बहुत ग़रीब हैं; इनकी आर्थिक दशा बहुत ख़राब है। इन्हें खेती आदि के लिए रुपये की बहुत ज़रूरत होती है, परन्तु इनकी साख कम होने के कारण इन्हें महाजन बहुत अधिक सूद पर रुपया उधार देते हैं। इसका उपाय क्या है?

पर, कभी-कभी बहुत प्रयत्न करने पर भी, नहीं मिल सकती, वही, कई मनुष्यों की साख पर कम व्याज में, और आसानी से मिल सकती है। इसलिए नागरिकों को सहकारी साख समितियां स्थापित करने की बड़ी आवश्यकता है, जो उनकी साख बढ़ावें। इन समितियों का उद्देश्य यह होता है कि किसानों की कर्ज़दारी दूर हो, वे फ़िज़ूलख़र्ची न करें, तथा उन्हें ऐसे उपयोगी कार्यों के लिए रुपया उधार मिल सके, जिनसे उनकी आमदनी बढ़े।

सरकारी क़ानून—भारतवर्ष में सहकारी साख समितियों का क़ानून बना हुआ है; इसकी कुछ मुख्य मुख्य बातें इस प्रकार हैं:—

१—किसी गांव या शहर के एक ही जाति या पेशे के, अठारह साल से अधिक आयु के कम-से-कम दस आदमी मिलकर सहकारी साख समिति बना सकते हैं। (२) समिति के सदस्य (मेम्बर) वे ही आदमी होने चाहिएँ, जो एक दूसरे को अच्छी तरह जानते हों। (३) समिति का कार्य अपने सदस्यों की अमानत जमा करना, दूसरे आदमियों से एवं अन्य समितियों से रुपया उधार लेना, तथा अपने सदस्यों को आवश्यकतानुसार उधार देना, है। (४) समिति का प्रत्येक सदस्य अपनी समिति का कुल कर्ज़ चुकाने का ज़िम्मेवार होता है। (५) समिति इन सिद्धान्तों को बर्तते हुए, अपनी स्थानीय परिस्थिति के अनुसार यथोचित उपनियम बना सकती है। (६) इन समितियों की देख-भाल करने तथा इनके काम को बढ़ाने के लिए, हर एक प्रान्त में इनका एक प्रधान अधिकारी रहता है, उसे रजिस्ट्रार कहते हैं।

सरकार ने इन समितियों को कई सुविधाएँ दे रखी हैं। इन समितियों तथा इनके सदस्यों की ओर से, समिति के सम्बन्ध में जो दस्तावेज़ लिखे जायँ, उनका स्टाम्प ख़र्च, तथा जो रजिस्ट्री करायी जायँ, उनका रजिस्टरी-ख़र्च, माफ़ है। सहकारी साख-समितियों के मुनाफ़े पर इनकम टैक्स भी माफ़ है। एक समिति अपने ज़िले की दूसरी समिति को रुपया बिना ख़र्च भेज सकती है। समिति के किसी सभासद का कोई हिस्सा कभी कुर्क नहीं किया जा सकता। रजिस्टरी होजाने पर समिति को ज़िले के सेंट्रल बैङ्क से निर्धारित सूद पर रुपये मिलने लगते हैं। समितियां रुपया उधार लेकर, उसे कुछ अधिक सूद पर अपने सदस्यों को दे देती हैं। इस सूद की दर उस दर से कम होती है, जिस पर साधारणतया किसानों को किसी अन्य व्यक्ति या संस्था से रुपया उधार मिल सकता है।

इन समितियों से सर्वसाधारण को और भी लाभ होता है। लोगों को आपस में मिलकर काम करने की आदत पड़ती है। इससे उनमें पारस्परिक प्रेम और एकता की वृद्धि होती है। इनके सभासदों को मितव्ययिता का अभ्यास हो जाता है, इससे उनकी आर्थिक दशा सुधरती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इन समितियों के प्रचार की बड़ी आवश्यकता है।

इन समितियों के लिए जो बैङ्क खोले जाते हैं, उन्हें सहकारी बैङ्क कहते हैं। इनसे सर्वसाधारण और विशेषतया किसानों का बहुत सम्बन्ध होता है, और इनका प्रचार नगरों और गांवों में बढ़ता जा रहा है। ये बैङ्क उधार ले तो सबसे लेते हैं, परन्तु सहकारी

समितियों के सिवाय, और किसी को उधार देते नहीं। इनके दो भेद हैं, प्रान्तीय और सेंट्रल। प्रान्तीय बैंक, सेंट्रल बैंकों की सहायता तथा उनकी देख-रेख करते हैं। सैंट्रल बैंक एक ज़िले की, या उसके किसी भाग की, सहकारी समितियों की सहायता करते हैं। सहकारी बैंकों का प्रबन्ध प्रायः स्थानीय आदमी ही करते हैं।

सतरहवाँ पाठ

स्वास्थ्य रक्षा

पाठको! तुम्हें अपने अनुभव से यह बात ज्ञात होगी कि जब कोई मनुष्य बीमार पड़ जाता है तो उसका सब सुख नष्ट हो जाता है, उससे कोई काम ठीक नहीं हो सकता। इसके अलावा वह जिस आदमी से अपनी बीमारी में सेवा-सुश्रुषा कराता है, उसके भी काम में हर्ज होता है। इसलिए हर एक आदमी को स्वस्थ रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

स्वास्थ्य रक्षा के उपाय—स्वस्थ रहने के लिए आदमी को शुद्ध और सादा भोजन करना चाहिए, साफ़ हवा के मकान में रहना चाहिए, स्वच्छ जल पीना चाहिए, आवश्यक व्यायाम और विश्राम करना चाहिए, मन में पवित्र विचार रखने चाहिएं, और अच्छी संगति में रहना चाहिए। इन बातों को समझने में कुछ कठिनाई नहीं

होती, परन्तु बहुतसे आदमी अपनी निर्धनता और अज्ञान आदि के कारण इन पर अमल नहीं कर सकते। उनके मकान तंग या गंदी गलियों में होते हैं, वे सड़ी-गली चीज़ें खा लेते हैं, और जिस कुएँ या तालाब पर आदमी नहाते हैं, उसका ही पानी पीते रहते हैं। इससे उनके शरीर पीले और कमज़ोर पड़ जाते हैं, और मलेरिया, प्लेग, हैज़ा आदि रोगों के घर बन जाते हैं। लोगों की निर्धनता दूर करने के लिए देश में उद्योग-धंधे, कला कौशल आदि आजीविका के साधनों का प्रबन्ध होना चाहिए। इसी प्रकार अज्ञान हटाने के वास्ते शिक्षा के प्रचार की बहुत आवश्यकता है। इनका वर्णन पहले किया जा चुका है।

कुछ आदमी ग़रीब तो नहीं होते पर अपनी शौकीनी के कारण ही बड़ा कष्ट पाते हैं। वे अपने खान पान, रहन-सहन आदि में अमीरी दिखाना चाहते हैं। उदाहरण के तौर पर वे अपने हाथ-पाँव हिलाकर काम करना नहीं चाहते, सब काम नौकरों से कराते हैं; कुछ व्यायाम या कसरत भी नहीं करते। मैदे या बेसन की तली हुई चीज़ें, या मिठाई अधिक खाते हैं। पान बीड़ी, इतर फुलेल, चाय, या नशीली चीज़ों का सेवन करते हैं। फिर ये तन्दुरुस्त कैसे रहें? लोगों को संयम या सादगी से रहना चाहिए।

हमारे देश में, बाल-विवाह तथा परदे आदि की बहुतसी कुरीतियाँ भी जनता के स्वास्थ्य में बाधक होती हैं। इन बातों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हो रहा है, और इनमें थोड़ा-बहुत सुधार भी होता जा रहा है। परन्तु, अभी बहुत काम होना शेष है। भारत-

वासियों की औसत आयु लगभग तेईस वर्ष है, जबकि अन्य देशों में यह चालीस वर्ष, तथा इससे भी अधिक है। इसी प्रकार यहाँ फ़ी हज़ार आदमियों में से कोई तीस आदमी हर साल मर जाते हैं, जबकि संसार में कितने ही देश ऐसे हैं, जहाँ हज़ार पीछे केवल दस ग्यारह आदमी ही मरते हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के कार्यों की ओर ध्यान देने से इन बातों में बहुत सुधार हो सकता है।

स्वास्थ्य रक्षा का प्रबन्ध—शहरों में म्युनिसपैलटियों के उद्योग से स्वास्थ्य सम्बन्धी कई प्रकार के कार्य हो रहे हैं। बड़े क़स्बों में, या शहरों में सफ़ाई का डाक्टर (हैल्थ आफ़ीसर) रहता है। गन्दे पानी के बहने के लिए नालियाँ या मोरियाँ बन रही हैं। कुछ शहरों में खुले बाज़ार और चौड़ी सड़कें भी बन रही हैं। परन्तु आवश्यकता बहुत अधिक काम की है। शहरों में मामूली हैसियत के आदमियों को साधारण किराये पर अच्छा साफ़ हवादार मकान मिलना असम्भव हो रहा है। कुछ म्युनिसपैलटियों ने इस ओर ध्यान देना शुरू किया है।

देहातों में खुली हवा का सुभीता होने पर भी, स्वास्थ्य रक्षा का प्रश्न बहुत कठिन है। प्रायः वहाँ गन्दे पानी के बहने के लिए पक्की नालियों या मोरियों का अभाव ही है, जिधर ढलाव मिल जाता है उधर ही वह बहने लगता है। अनेक स्थानों में रास्ते बड़े ऊँचे-नीचे या तंग हैं। वर्तमान ढङ्ग की खुली चौड़ी सड़कें वहाँ ढूंढे से भी न मिलेंगी। रोगों का प्रचार बहुत अधिक है। ज़िला-बोर्ड कुछ ध्यान देते हैं, परन्तु धनाभाव के कारण वे बहुधा बहुत ही कम काम कर पाते हैं।

म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के लिए लोगों को कहीं-कहीं मैजिक (जादू की) लालटैन के व्याख्यानों से यह बतलाया जाता है कि भिन्न-भिन्न रोग किन-किन कारणों से पैदा होते हैं, और उन्हें रोकने का क्या उपाय है। प्लेग और चेचक आदि का टीका लगवाया जाता है। अब कई जगहों में प्रतिवर्ष नियमित रूप से 'शिशु सप्ताह' मनाया जाता है; इस सप्ताह में तन्दुरुस्त बच्चों की नुमायश की जाती है, और स्त्रियों को यह समझाया जाता है कि बच्चों के स्वास्थ्य के लिए किन-किन बातों को अमल में लाया जाना आवश्यक है।

बाज़ारों में सड़ी-गली या ख़राब चीज़ें बिकने न पावें, तथा खाने-पीने की किसी चीज़ में मिलावट न हो, इसके लिए म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों की ओर से आवश्यक नियम बने हुए हैं। जो कोई उन्हें भंग करता है, उसे दंड दिया जाता है। नागरिकों को चाहिए कि इन नियमों का यथेष्ट पालन करें; अपने स्वार्थ या अनुचित लाभ के लिए ऐसी वस्तुओं को कदापि न बेचें, जिससे दूसरे बन्धुओं के स्वास्थ्य को हानि पहुँचे।

सरकारी स्वास्थ्य विभाग—स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी कामों के लिए कभी-कभी म्युनिसपैलटियों और ज़िला-बोर्डों को सरकार की ओर से विशेष सहायता मिलती है। इसके अलावा सरकार का, हर एक प्रान्त में इस काम के लिए, एक अलग विभाग है, उसे "सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग" कहते हैं। यह विभाग अपने-अपने प्रान्त के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों का निरीक्षण करता है। प्रान्त भर में इस विभाग

का जो सबसे बड़ा अधिकारी होता है, उसे सार्वजनिक स्वास्थ्य का 'डायरेक्टर' कहते हैं। डायरेक्टर के नीचे हर एक ज़िले में एक-एक 'सिविल सर्जन' होता है। इसे तुम जानते ही होगे। यह ज़िले के अस्पतालों और शफ़ाख़ानों को देखने के अलावा ज़िले के स्वास्थ्य सम्बन्धी कामों का निरीक्षण करता है, और उनके सम्बन्ध में ज़िला-मजिस्ट्रेट को आवश्यक बातों की रिपोर्ट करता रहता है।

अठारहवाँ पाठ

दुर्व्यसनों का नियंत्रण

पाठको ! तुम अवश्य ही अच्छे नागरिक बनना चाहते होगे। इसके लिए तुम्हें शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, तथा स्वस्थ रहना चाहिए; शिक्षा और स्वास्थ्य के विषय में तुम इस पुस्तक में पहले पढ़ चुके हो। परन्तु, इसके अतिरिक्त इस बात की भी बड़ी आवश्यकता है कि तुम्हारा चालचलन अच्छा हो, तुम्हें कोई बुरी आदत न पड़े। इसके वास्ते, तुम्हें अच्छी संगति में रहना चाहिए। बुरी संगति से लोगों को बुरे सिनेमा नाटक आदि देखने, ख़राब किताबें पढ़ने, जुआ खेलने, शराब या भंग आदि पीने और अफ़ीम आदि नशीली चीजें खाने की आदत पड़ जाती है। और, ये दुर्व्यसन बहुत हानिकारक होते हैं।

सिनेमा नाटक--ये अच्छी शिक्षा देनेवाले भी होते हैं, और, मन पर बुरा प्रभाव डालनेवाले भी। हमें बुरे दृश्यों से बचना चाहिए, और यदि हम इस बात का ठीक विचार न कर सकें कि कौनसा सिनेमा या नाटक अच्छा है, और कौनसा बुरा, तो बेहतर है कि हम इन्हें बिलकुल ही न देखें।

सरकार ने नियम बना रखा है कि जो कम्पनी बुरे दृश्य दिखाये, उस पर मामला चल सकता है, और उसे दंड मिल सकता है। परन्तु साधारण बुराइयाँ क़ानून की पकड़ में नहीं आतीं। नागरिकों को स्वयं विचार करके, इनमें भाग लेना चाहिए, अन्यथा उनका बड़ा अनहित होगा।

बुरी पुस्तकें--पाठको! पुस्तकों से कैसी अच्छी-अच्छी बातें ज्ञात होती हैं, यह तुम जानते हो। पर यह न समझना कि सब पुस्तकें अच्छी ही होती हैं, चाहे जो पुस्तक उठायी और पढ़ने लग गये। बड़े दुख की बात है कि कोई-कोई लेखक पुस्तकों में उपन्यास, नाटक, क़िस्से कहानी आदि के रूप में, बहुत गंदे विचार भर देता है। इससे पाठकों की बड़ी हानि होती है। यद्यपि सरकारी क़ानून से, बुरी पुस्तकें प्रकाशित करना अपराध है, परन्तु फिर भी समय-समय पर बहुतसी ख़राब पुस्तकें छपती ही रहती हैं। तुम्हें जो पुस्तकें पढ़नी हों, उनके विषय में तुम्हें अपने अध्यापकों का परामर्श लेलेना चाहिए। बड़े होने पर पुस्तक के अच्छी या बुरी होने की जाँच तुम स्वयं कर सकोगे।

जुआ— देखो, लालच बुरी बला है। आदमी झट इसके फंदे में फँस जाते हैं। वे सोचते हैं कि किसी प्रकार बिना मेहनत किये, आसानी से ही, कुछ धन मिल जाय; इसलिए वे जुआ खेलने लगते हैं। यहाँ दिवाली आदि के अवसर पर, कुछ लोग जुआ खेलना मानो धर्म समझते हैं। जुए में आदमी बहुत धन दौलत हार जाते हैं; कभी-कभी तो घर का सामान तक बिकने की नौबत आ जाती है। तुम कभी ऐसा मत सोचना कि अजी, दो चार पैसे से खेला जाय तो क्या हानि है। जुआ खेलने का विचार ही बुरा है। यह लत एक बार लगी, फिर बढ़ती ही जाती है। जीतनेवाले को अधिक धन पाने की तृष्णा हो जाती है, हारनेवाले को अपने खोये हुए धन को प्राप्त करने की इच्छा सताती है। इसलिए उचित है कि इसमें हाथ ही न डाला जाय। सरकार ने जुआ रोकने के लिए क़ानून बना रखा है; जो कोई जुआ खेलता पाया जाता है, उसे सज़ा दी जाती है।

नशीली चीज़ों का सेवन—अब नशीली चीज़ों के सेवन की बात सुनो। शराब, अफ़ीम आदि चीज़ें किसी-किसी बीमारी में, दवाई के तौर पर भी, काम आती हैं; परन्तु इनका ज़्यादह ख़र्च लोग शौक़िया करते हैं। उन्हें आदत पड़ जाती है। फिर उन्हें दिनों दिन अधिक ही नशे की ज़रूरत मालूम होती है। अधिक नशा करने पर उनकी बड़ी दुर्दशा होने लगती है। यह तो तुमने देखा ही होगा कि शराबियों का कैसा बुरा हाल होता है। कोई नालियों में पड़ता है, कोई गाली-गलौच बकता है, कोई किसी को

मारता-पीटता है। अफ़ीम, गांजा, भंग, चरस आदि मादक पदार्थों को सेवन करनेवालों की भी ऐसी ही दशा होती है। उन्हें यह होश नहीं होता कि वे क्या करते हैं, क्या कहते हैं, और कहां जाते हैं। वे अपना धन तो इन चीज़ों में नष्ट करते ही हैं, इनसे उनका शरीर भी पीला, कमज़ोर और अनेक बीमारियों का घर बन जाता है। इसलिए याद रखो कि चाहे तुम्हारे मित्र कहें या रिश्तेदार, भूलकर भी इन चीज़ों के सेवन का नाम न लेना। यह भी याद रखो कि तमाखू भी बड़ा विषैला पदार्थ है। इससे शरीर को बहुत हानि पहुँचती है। दुःख की बात है कि नवयुवकों में सिगरेट और बीड़ी पीने का शौक बढ़ता जारहा है। तुम्हें इससे हर प्रकार बचना चाहिए। चाय की कम्पनियों के एजंट चाय का प्रचार करने के लिए तरह-तरह के विज्ञापन देते रहते हैं, इससे चाय का प्रचार विद्यार्थियों, किसानों और मज़दूरों—सभी में बढ़ता जा रहा है। चाय स्वास्थ्य को बिगाड़नेवाला पदार्थ है। पाठकों को इसका कदापि सेवन न करना चाहिए, और जिनकी आदत पड़ गयी हो, उन्हें इसको छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए।

आबकारी विभाग--शराब, अफ़ीम, गांजा, भंग, चरस, आदि मादक पदर्थों के सेवन की रोक थाम करने के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक सरकारी विभाग रहता है। उसे आबकारी या 'एक्साइज़' विभाग कहते हैं। प्रान्त भर में इस विभाग का सबसे ऊँचा अधिकारी 'एक्साइज़ कमिश्नर' कहलाता है। इसके नीचे हर एक ज़िले में एक-एक एक्साइज़ अफ़सर रहता है। इसके नीचे इस विभाग के

इन्सपैक्टर, आदि कर्मचारी होते हैं। इस विभाग के कर्मचारी जगह-जगह घूमते रहते हैं, और, इस बात की जांच करते हैं कि कोई आदमी इन पदार्थों को बिना सरकारी इजाज़त तो नहीं बनाता या बेचता; तथा, एक आदमी नियम के अनुसार, जितना पदार्थ मोल ले सकता है उससे अधिक तो नहीं लेता। छोटे लड़कों के हाथ ये चीज़ें नहीं बेची जातीं। जो कोई इन नियमों को भंग करता है, उसे आबकारी विभाग के आदमी सज़ा दिलाते हैं।

विशेष वक्तव्य—इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि जहां-तहां ऐसे उपदेशों तथा मेजिक लालटेन के व्याख्यानों आदि का प्रबन्ध किया जाय, जिन से लोग नशे की हानियों को समझें, और, इसे छोड़ने लगें। देश में कहीं-कहीं ऐसी सभाएँ काम कर रही हैं, जिनका उद्देश्य मादक वस्तुओं के लिए, सर्वसाधारण के मनमें, घृणा पैदा करना है। इन्हें 'टेम्परेंस' सभाएँ कहते है। इन से, आबकारी विभाग को सहानुभूति रखनी चाहिए, तथा, इन्हें सरकार की ओर से समुचित सहायता मिलनी चाहिए। कुछ देशों में इस विषय का क़ानून बन गया है कि वहां केवल औषधियों के लिए ही मादक वस्तुएँ बनें, अधिक नहीं। अच्छा हो, भारतवर्ष में भी नशीली चीज़ों का इतना अधिक प्रचार, सरकारी क़ानून द्वारा, बन्द कर दिया जाय। कहीं-कहीं प्रान्तीय सरकारें इसका प्रयत्न कर रही है।

उन्नीसवाँ पाठ

नागरिकों के कर्त्तव्य

पिछले पाठों में यह बताया गया है कि सरकार क्या-क्या कार्य करती है। उन कार्यों के वर्णन में नागरिकों के कुछ कर्त्तव्य भी बताये जा चुके हैं। यहां नागरिकों के साधारण कर्त्तव्य बताये जाते हैं।

अपनी और दूसरों की उन्नति करना—सरकार की ओर से नागरिकों की शिक्षा तथा स्वास्थ्य-रक्षा आदि के जो काम किये जाते हैं, उनसे लाभ उठाना या न उठाना नागरिकों के ही हाथ में है। उन्हें चाहिए कि अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक तथा नैतिक उन्नति के लिए स्वयं प्रयत्न करें। साथ ही इस बात का ध्यान रखें कि उनके विविध कार्यों से किसी का अहित न हो। जब कभी अनुकूल अवसर हो, उन्हें दूसरों की सेवा करनी, तथा उनकी उन्नति में सहायता देनी चाहिए। अपनी तथा दूसरों की उन्नति के लिए कई बातें आवश्यक हैं। पहले, अवकाश के सदुपयोग का विचार करते हैं।

अवकाश का सदुपयोग—पाठको! तुम्हें कभी लिखने-पढ़ने के काम से छुट्टी मिलती ही होगी। उस समय तुम क्या करते हो? क्या व्यायाम या विश्राम करते हो? बहुत अच्छा, एक सीमा तक ऐसा करना अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु कभी-कभी और भी तो अवकाश मिलता होगा। यदि तुम उस समय का ठीक-ठीक उपयोग

करो तो अपनी, तथा दूसरों की बहुत उन्नति कर सकते हो। यदि तुम्हारे ग्राम या नगर में कोई वाचनालय या पुस्तकालय हो तो तुम्हें अवकाश के समय वहां जाकर विविध पत्र-पत्रिकाएँ देखनी चाहिएँ, या महापुरुषों के जीवनचरित्र अथवा अन्य पुस्तकें पढ़नी चाहिएँ। इससे तुम्हारा मनोरंजन तो होगा ही, इसके साथ-साथ अनेक विषयों में तुम्हारा ज्ञान भी बढ़ेगा। अगर तुम्हारी रुचि हो तो इस समय में तुम विविध उपयोगी विषयों पर निबन्ध लिखने का अभ्यास कर सकते हो। इससे तुम्हें अपने विचार अच्छी तरह प्रकट करने की योग्यता प्राप्त हो जायगी; सम्भव है, तुम कभी अच्छे लेखक बन सको। अवकाश के समय अपने पड़ोस के बालकों को लिखने-पढ़ने में लगाकर, तुम उनमें शिक्षा प्रचार करने में सहायता कर सकते हो।

जब कभी तुम्हें अपने ग्राम या नगर से बाहर, दूसरी जगह जाने का सुभीता हो, तो तुम्हें वहां की कारीगरी या प्राकृतिक तथा ऐतिहासिक दृश्य देखने चाहिएँ। तुम्हें चित्रकारी, बागवानी (बाग में फूलों आदि के पौदे लगाना), तैरने या बालचर (स्काउट) आदि के काम में अपना अनुराग बढ़ाना चाहिए, जिससे बड़े होने पर तुम्हें अपने अवकाश का समय काटना दूभर प्रतीत न हो; तुम उससे अपना एवं दूसरों का हित-साधन कर सको।

स्वावलम्बन—प्रत्येक नागरिक को अपना निर्वाह स्वयं करना चाहिए। यह बहुत अनुचित है कि हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें, और अपने बाप-दादा की कमायी हुई सम्पत्ति में से खायें-खर्चें; या, अन्य भाई-बन्धुओं के आश्रित होकर पड़े रहें, अथवा, दान या भिक्षा-

वृत्ति से अपनी उदर पूर्ति करें। इससे हमारी उन्नति में बाधा पड़ती है, हमारे साहस, पुरुषार्थ, और आत्म-सम्मान आदि सद्गुणों का विकास नहीं होता। साथ ही, हम दूसरों का कमाया धन खर्च करके समाज को उस लाभ से वंचित करते हैं, जो उसे उस धन के किसी अन्य उपयोगी कार्य में खर्च करने से होता। जिन लोगों को परमात्मा ने हाथ-पांव दिये हैं, वे दूसरों पर भार क्यों बनें! दान-दक्षिणा या सहायता लेना केवल उनके लिए ठीक है, जो अपाहज अर्थात् लंगड़े लूले आदि होने की वजह से, भरसक उद्योग करने पर भी, अपना निर्वाह करने में असमर्थ होते हैं, अथवा जो अपना सब समय समाज या राज्य की उन्नति के लिए विविध उपाय सोचने या काम करने में लगाते हैं। इससे स्पष्ट है कि साधारणतया प्रत्येक नागरिक को स्वावलम्बी होना चाहिए।

मितव्ययिता बहुतसे आदमी आगे की चिन्ता नहीं करते, वे भविष्य के लिए कुछ धन बचाकर रखने की आवश्यकता नहीं समझते। वे कहा करते हैं कि जब मिलता है, तो क्यों न खायें, पीयें और मौज उड़ावें। वे भूल जाते हैं कि आज हम स्वस्थ हैं, तो धन पैदा कर रहे हैं। कौन जाने, कल हम बीमार पड़ जायँ, या कोई अन्य दुर्घटना हो जाय, जिससे आजीविका-प्राप्ति कठिन हो जाय, और दूसरों के सामने हाथ पसारना पड़े। निदान, हमें चाहिए कि यथाशक्ति प्रति मास अपनी आय में से कुछ बचा रखने की आदत डालें, जिससे आवश्यकता होने पर, संचित धन हमारे काम आवे। यदि हमारे पास कुछ पैसा जमा होगा तो हम उससे दीन अनाथों आदि

की सहायता भी कर सकते हैं, तथा अपने आश्रितों को दूसरों का मोहताज होने से बचा सकते हैं। धन संचय करने के लिए देश में जगह-जगह बैंक खोले जाते हैं, तथा जिन्दगी के बीमे की व्यवस्था की जाती है। इसके विषय में तुम पहले पढ़ चुके हो।

सहिष्णुता—हिन्दू हो या मुसलमान, ईसाई हो या पारसी, इस देश के सभी निवासी यहां के नागरिक हैं। सब को परस्पर में, एक-दूसरे से, सहानुभूति और सहिष्णुता का बर्ताव करना चाहिए। देश तथा राज्य हमारा सब का है, और हम सब को मिलकर उसके कल्याण के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। जिस देश के आदमी, धार्मिक या सामाजिक भेद-भाव रखने के कारण एक दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं, वे अपनी उन्नति में स्वयं बाधक होते हैं। किसी देश में जाति-बिरादरी, मत, सम्प्रदाय आदि की भिन्नता होते हुए भी, यदि उसमें राज्य सम्बन्धी, अर्थात् नागरिक विषयों में एकता हो, तो उसकी निरन्तर उन्नति होती रहेगी। भारतीय नागरिकों को इस विषय पर समुचित ध्यान देना चाहिए।

सरकार की सहायता करना—पहले बताया जा चुका है कि सरकार नागरिकों के हित और उन्नति के लिए होती है। ऐसी दशा में, उसकी सहायता करना, अपनी ही उन्नति करना है। अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार, नागरिकों को सरकार की समुचित सहायता करनी चाहिए। जो आदमी कोई सरकारी काम करते हों, किसी क़ानून बनानेवाली सभा, म्युनिसपैलटी, ग्राम बोर्ड या पंचायत आदि के सदस्य हों, अथवा इन संस्थाओं के चुनाव में अपना मत दे

सकते हो, उन्हें अपना कार्य, अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए, सोच-विचारकर करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त इस विषय में दो बातें और विचारणीय हैं; सरकारी क़ानूनों का पालन करना और सरकारी टैक्स देना। यदि नागरिक ये कार्य न करें तो शासन-कार्य चल ही नहीं सकता। अच्छी सरकारें जो क़ानून बनाती हैं, या जो टैक्स (या कर) लगाती हैं, वे देश की सुख शान्ति और उन्नति के लिए ही होते हैं। जो आदमी क़ानून का पालन नहीं करते, या टैक्स नहीं देते, उन्हें दंड मिलता है। परन्तु दंड मिले या न मिले, नागरिकों को ये कार्य अपना कर्तव्य समझकर, करने चाहिएँ। यदि कोई क़ानून या टैक्स अहितकर प्रतीत हो तो बड़ी आयुवाले योग्य तथा अनुभवी नागरिकों को उसका विचार करके, आवश्यकतानुसार, उसे बदलवाने या रद्द कराने का प्रयत्न करना चाहिए।

शासनपद्धति का ज्ञान प्राप्त करना—तुम यह जान चुके हो कि नागरिकों को, सरकार द्वारा किये जानेवाले विविध कार्यों से लाभ उठाना चाहिए, उन्हें सरकार की सहायता करनी चाहिए, तथा उसके अच्छे उपयोगी क़ायदे क़ानूनों का पालन करना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें अपने देश के राजप्रबन्ध का ज्ञान हो। भारतवर्ष की शासनपद्धति का विशेष हाल हमारी 'सरल भारतीय शासन', तथा 'भारतीय शासन' पुस्तकों में दिया गया है, जो तुम पीछे पढ़ोगे।

बीसवाँ पाठ

नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा

पिछले पाठ में तुम यह पढ़ चुके हो कि हमें यथा-सम्भव दूसरों की सेवा करनी चाहिए। परन्तु यदि हमें सेवा करने का ज्ञान और अभ्यास नहीं है तो अवसर उपस्थित होने पर, हमसे इस विषय में बहुत ग़लतियाँ हो सकती हैं। कल्पना करो कि एक आदमी नदी में डूब रहा है, हम उसे देखते हैं। नागरिक शिक्षा की पुस्तक पढ़ने से हम जानते हैं कि उसे बचाना हमारा कर्तव्य है। परन्तु यदि हमें स्वयं ही तैरना न आता हो, और हमने दूसरों को डूबने से बचाने का कभी अभ्यास न किया हो, तो चाहे हमारी इच्छा कितनी ही प्रबल क्यों न हो, हम उस आदमी को बचाने का कार्य नहीं कर सकते। इसी प्रकार मान लो हमारे एक पड़ोसी के मकान में आग लगी, है हमारा जी उसे देखकर बहुत दुखी होता है, परन्तु यदि हम अपने पड़ोसी से केवल मौखिक सहानुभूति प्रकट करें, तो इससे उस बेचारे को विशेष लाभ न होगा। वहां तो ज़रूरत है कि जैसे-बने, फुर्ती से आग बुझायी जाय, और घर के अन्दर जो प्राणी अथवा सामान है, उसकी रक्षा की जाय। यह तभी हो सकता है, जब हम ऐसे कार्य की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करलें।

व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाएँ—इससे यह स्पष्ट है कि देश में नागरिकता की व्यावहारिक शिक्षा देनेवाली संस्थाओं का होना बहुत आवश्यक है। यहां ऐसी मुख्य-मुख्य संस्थाएँ निम्नलिखित हैं:—(१) बालचर या स्काउट संस्थाएँ, (२) सेवा समितियां और (३) सहकारी समितियां। इनमें से सहकारी समितियों के विषय में पहले लिखा जा चुका है। अन्य संस्थाओं के विषय में कुछ आवश्यक बातें आगे दी जाती हैं।

बालचर संस्थाएँ—बालचर संस्थाओं का उद्देश्य लोगों को सदाचारी, स्वावलम्बी, साहसी, और सेवा-व्रती बनाना है। बालचर सम्बन्धी नियम निम्नलिखित हैं:—(क) बालचर की बात, व्यवहार का विश्वास किया जाता है। (ख) वह महेश (परमात्मा), देश, नरेश, माता-पिता, गुरू, स्वामी, साथियों तथा अपने अधीन व्यक्तियों के प्रति वफ़ादार होता है। (ग) वह दूसरों की सहायता करता है। (घ) वह सब का मित्र, तथा अन्य बालचरों का बन्धु होता है, चाहे वे किसी ही वर्ण, धर्म या जाति के हों। (च) वह सुशील और नम्र होता है। (छ) वह पशु पक्षियों पर दया करता है। (ज) वह आज्ञाओं का पालन करता है। (झ) वह सब कठिनाइयों में हसमुख रहता है। (ट) वह मितव्ययी होता है। (ठ) वह मन वचन तथा कर्म से पवित्र होता है।

भारतवर्ष में बालचर संस्थाएँ दो प्रकार की हैं, (१) बेडन-पावल* बालचर संस्थाएँ, (२) सेवा-समिति बालचर संस्थाएँ।

*बेडन पावल उस सज्जन का नाम है, जिसने इङ्गलैन्ड में सबसे पहले बालचर आन्दोलन का श्रीगणेश किया।

दोनों के उद्देश्य और नियम प्रायः एकसे ही हैं। कुछ थोड़ासा अन्तर है। पहली की ओर सरकार का रुख अधिक है, दूसरी की सहायक अधिकतर जनता है, यद्यपि उसे सरकार से भी कुछ सहायता मिलती है। बेडनपावल संस्था का प्रधान स्काउट भारतवर्ष में वाइसराय, तथा यहां के प्रत्येक प्रान्त में, उस प्रान्त का मुख्य शासक होता है। इसके केन्द्रीय कार्यालय मदरास और कलकत्ता में हैं। इसकी शाखाएँ प्रायः स्कूलों में, विशेषतः गवर्मेंट हाई स्कूलों में ही होती हैं।

सेवा समिति स्काउट्स का मुख्य कार्यालय प्रयाग में है। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। प्राइवेट स्कूलों में इसकी ही टोली होती हैं। अनेक शहरों के मोहल्लों और गांवों में भी इसकी शाखाएँ हैं। इस प्रकार, इसके द्वारा विद्यार्थियों के अतिरिक्त, अन्य युवक भी शिक्षा पाते हैं। तरह तरह के खेल कसरत द्वारा उनमें सजीवता, साहस और स्फूर्ति की वृद्धि की जाती है। कभी आग लगने का नक़ली दृश्य उपस्थित करके बालचरों को उसे बुझाने, तथा वहां के आदमियों, बच्चों और सामान की रक्षा करने, की क्रियात्मक शिक्षा दी जाती है। कभी उन्हें इस बात का अभ्यास कराया जाता है, कि जल में डूबते हुए आदमी को किस प्रकार बचाया जाय, अथवा ज़ख्मी आदमी की मरहम-पट्टी तथा अन्य सेवा-सुश्रूषा किस तरह की जाय। निदान, बालचरों को तरह-तरह से, सेवक जीवन और सैनिक जीवन का अनुभव कराया जाता है। स्वावलम्बन, मितव्ययिता, सहकारिता आदि तो उनके अनिवार्य कर्त्तव्य ही हैं।

सेवा समितियाँ—इनके कुछ सदस्य बालचर संस्थाओं की शिक्षा पाये हुए होते हैं। इनके कार्य स्थानीय आवश्यकताओं तथा सुविधाओं के अनुसार भिन्न भिन्न होते हैं, यथा स्टेशनों पर पानी पिलाना, मेले-तमाशों में भूले-भटके स्त्री बच्चों को रास्ता बताना, अथवा उन्हें उनके सम्बन्धियों के पास पहुँचाना, रोगियों को दवा देना, लावारिस मुर्दों को जलाना, आग बुझाना, इत्यादि। ये जनता में शिक्षा प्रचार के लिए कहीं कहीं अपनी शक्ति के अनुसार वाचनालय, या रात्रि-पाठशालाएँ भी खोलती हैं, जिनमें इनके कुछ सदस्य अवैतनिक सेवा किया करते हैं। कहीं-कहीं इन संस्थाओं को म्युनिसपैलटियों या ज़िला बोर्डों आदि से कुछ सहायता मिलती है, अथवा बाज़ारवाले तथा अन्य व्यक्ति चन्दा आदि करके इनकी सहायता करते हैं। अधिकांश सेवा समितियों का संगठन और आर्थिक स्थिति संतोषजनक नहीं है। नागरिकों को इनकी भरसक सहायता करना चाहिए।

अन्य संस्थाएँ—इनके अतिरिक्त, देश के भिन्न-भिन्न भागों में कुछ संस्थाएँ ख़ास उद्देश्य से काम कर रही हैं, यथा 'सोशल सर्विस लीग' (समाज सेवा संघ), बम्बई; जीव दया संघ, बम्बई; डेकन एज्यूकेशन सोसायटी' (दक्षिण शिक्षा समिति) पूना; 'सर्वेंट्स-आफ-इंडिया सोसायटी' (भारत सेवक समिति) पूना; 'सर्वेंटस-आफ-दी-पीपल्स सोसायटी' (लोक सेवक समिति) लाहौर; हिन्दुस्तानी सेवा दल, हुबली (करनाटक); कौमी सेवा दल, अखिल भारतवर्षीय ग्रामोद्योग संघ और चर्खासंघ आदि। राष्ट्रव्यापी महान राष्ट्रीय संस्था

कांग्रेस को तो तुम जानते ही होगे। इन विविध संस्थाओं के विषय में विशेष बातें तुम्हें पीछे ज्ञात हो जायँगी।

राजप्रबन्ध सम्बन्धी शिक्षा—कितनी ही राजप्रबन्ध सम्बन्धी बातें भी ऐसी हैं जिनकी शिक्षा विद्यार्थी जीवन में दी जा सकती है। कुछ समय से इस ओर ध्यान दिया जाने लगा है। कहीं कहीं कुछ संस्थाओं में प्रति सप्ताह सभा होती है। इस में मुख्य अध्यापक उपस्थित तो रहता है, परन्तु केवल दर्शक के रूप में। कार्य संचालन करते हैं, विद्यार्थी ही। सभा में किसी नागरिक विषय पर वाद-विवाद होता है। कभी-कभी राज-प्रबन्ध सम्बन्धी साधारण घटनाओं का अभिनय किया जाता है। उदाहरणवत् यह दिखाया जाता है कि एक व्यक्ति कुछ अपराध करता है, इस पर पुलिस क्या-क्या कार्रवाई करती है, और अदालत में उसके विषय में किस तरह विचार होता है। अथवा, किसी पद के लिए एक आदमी की ज़रूरत है, उसका किस प्रकार विज्ञापन दिया जाता है, फिर जब उम्मेदवारों की दर्खास्तें आ जाती हैं तो उन पर किस तरह विचार किया जाता है। कभी-कभी यह दिखाया जाता है कि एक निर्वाचक संघ से किसी व्यक्ति का चुनाव करने का क्या ढङ्ग होता है, इसके लिए क्या क्या कार्रवाई होती है। इन बातों से विद्यार्थियों को अपने छात्र-जीवन में ही उन विविध नागरिक विषयों का व्यावहारिक ज्ञान हो जाता है, जो शिक्षा-संस्था को छोड़ने के बाद उनके सामने उपस्थित होंगे।

परिशिष्ट—१

मेरा प्यारा गांव

सफ़ाई और शिक्षा की बात

भारतवर्ष गांवों का देश है। यहां की नब्बे प्रतिशत जनता गांवों में रहती है। सौभाग्य से इस समय चहुँ ओर गांवों के सुधार की चर्चा है। यदि यह कार्य नेकनीयती और ईमानदारी से किया जाय तो देश की वास्तविक उन्नति होगी। प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है कि ग्राम-सुधार के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करे। यह क्षणिक मनोविनोद का विषय नहीं है। यह हमारे जीवन का ज्वलंत विषय है। यह इस युग की प्रधान समस्या है। गांवों के उद्धार में प्रत्येक विचारशील व्यक्ति की सहानुभूति होनी चाहिए, चाहे वह गांव का न होकर शहर का ही क्यों न हो, और यह सहानुभूति केवल जबानी जमा-खर्च न होकर क्रियात्मक रूप से होनी चाहिए। हां, सुधार-कार्य की सफलता विशेषतया गांववालों के उद्योग पर ही निर्भर होगी। और, इस महान यज्ञ में प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने हिस्से का काम करना चाहिए। कोई व्यक्ति ऐसा न होना चाहिए जो यह समझे कि

मैं किस योग्य हूँ? मैं क्या कर सकता हूँ? ग्राम-सुधार का कार्य तो राज्य या सरकार का है।

निस्सन्देह राज्य या सरकार का इस दिशा में उपेक्षा करना अपने दायित्व की अवहेलना करना है। परन्तु हमारा कार्य उसकी आलोचना करना ही न होकर अपने हिस्से का कार्य पूरा करना है। उदाहरणार्थ मैं एक घर में रहता हूँ। यह घर बहुत छोटा, कच्चा, इकमंज़िला और छप्पर की ही छतवाला है। यह मेरी निर्धनता का जीता जागता प्रमाण है। इसके लिए शायद मैं दोषी नहीं हूँ। परन्तु क्या इसे साफ़ सुथरा रखना भी मेरा कर्त्तव्य नहीं है। क्या मैं यह कहकर अपनी ज़िम्मेदारी से बच सकता हूँ कि गांव में और भी तो अनेक घर गंदे हैं; यहां तो गांव भर ही गन्दा है? गांव की गंदगी का उस सीमा तक तो मैं ही ज़िम्मेवार हूँ जहां तक उसका मुझसे और मेरे घर से सम्बन्ध है। मुझे अपने घर को साफ़ रखना चाहिए, प्रत्येक वस्तु ठीक ढङ्ग से उसके निश्चित स्थान पर रखनी चाहिए, और बाहर से भी घर साफ़ रखने के लिए पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। हां, बाहर से घर साफ़ रखने का अर्थ यह नहीं कि मैं अपने यहां का कूड़ा गली में, या पड़ोसी के घर के सामने फेंक दिया करूँ। नहीं, मुझे चाहिए कि प्रातःकाल अपने घर का कूड़ा बटोरकर एक स्थान पर जमा कर दूँ जिससे जब मेहतरानी या भंगिन आवे वह आसानी से लेजा सके। अपने घर को साफ़ करके दूसरों के घरों के सामने कूड़ा फेंकने की नीति बहुत ख़राब है। मुझे तो चाहिए कि अपने पड़ोसी के घर की सफ़ाई में भी सहायता दूँ। यदि मैं

सहायक न हो सकूँ तो मुझे बाधक तो कदापि न बनना चाहिए। अस्तु, यदि मैं अपना घर बाहर और भीतर से साफ़ रखता हूँ तो मैं गांव की सफ़ाई में भाग लेता हूँ, और यह मेरा अनिवार्य कर्तव्य है। मुझे सफ़ाई की बातें न करके सफ़ाई का उदाहरण उपस्थित करना चाहिए। मैं निर्धन भले ही कहा जाऊँ पर गंदगी-पसंद आदमियों में तो मेरी गणना कदापि न होनी चाहिए। मेरा रहन-सहन ऐसा होना चाहिए कि मेरा पड़ोसी भी उसकी ओर आकर्षित हो वह भी सफ़ाई में मेरा अनुकरण करे। मोहल्ले में जब दो घर साफ़-सुथरे रहने लगेंगे तो दूसरों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा; धीरे-धीरे गांव भर में सफ़ाई अधिक रहने लगेगी। मेरा गांव गंदा रहे यह मेरे लिए लज्जा की बात है; जहां तक मेरा वश चलेगा मैं इसकी गंदगी दूर करने का प्रयत्न करूँगा। गांव की सार्वजनिक सफ़ाई के लिए जो भी योजना बनेगी, उसमें मैं हृदय से सहयोग करूँगा। मैं स्वयं भी अपने ग्राम-बंधुओं से इस विषय में समय-समय पर विचार-विनिमय करूँगा। पर यह तभी तो उचित है, जब मैं अपने घरबार को साफ़-सुथरा रखूँ, और अपने को सफ़ाई-पसंद साबित करूँ।

अब शिक्षा की बात लूँ। मेरी उम्र चालीस वर्ष की है तो क्या और पैंतालीस वर्ष की है तो क्या ! अच्छा काम करने में उम्र का कोई बन्धन नहीं होना चाहिए, वह तो चाहे जब शुरू किया जा सकता है। यदि मैं अब तक कुछ पढ़ा-लिखा नहीं तो अवश्य ही इसमें समाज तथा राज्य भी दोषी हैं। पर मैं उनकी बात क्यों सोचने बैठूँ ? मुझे तो सोचना यह है कि मेरा कर्तव्य क्या है ? अवश्य

ही मेरे लिए यह बहुत ग्लानि की बात है कि मुझे साधारण पढ़ना-लिखना नहीं आता। रामायण मैं पढ़ नहीं सकता, सरकारी सूचनाएँ दूसरों से पढ़वाकर सुनता हूं, घर का हिसाब-किताब कराने के लिए मुझे दूसरों की शरण लेनी पड़ती है, और जब कहीं हस्ताक्षर करने की ज़रूरत होती है तो मुझे अंगूठे की निशानी लगानी पड़ती है। मुझ अभागे को अपना नाम भी लिखना नहीं आता!

पर अफ़सोस करने से ही तो काम न चलेगा। मुझे अपना नाम लिखना ही नहीं, पत्र लिखना भी आना चाहिए। मैं आज से निश्चय किये लेता हूं कि जैसे-भी हो मैं पढ़ना-लिखना सीखूँगा। अगर परमात्मा मेरी जिन्दगी एक वर्ष भी और बनायी रखे तो मैं अपढ़ अवस्था में नहीं मरूंगा। और, अब तो जगह-जगह साक्षरता का प्रचार हो रहा है। सरकार अध्यापकों तथा पाठशालाओं की व्यवस्था कर रही है। मैं भी शाला में भरती होऊंगा। हां यह ठीक है कि मेरा लड़का भी अनपढ़ है, और उसे भी पढ़ाना है। दोनों एक-साथ पढ़ना शुरू करेंगे। शायद कुछ आदमी बाप बेटे को एक-साथ पढ़ते देख-कर हँसी करें। पर ऐसी हंसी से मैं एक अच्छे कार्य को क्यों छोड़ूँ। जो लोग आज हँसी करेंगे, वे जब मेरे दृढ़ निश्चय को देखेंगे तो कुछ समय बाद स्वयं हंसना छोड़ देंगे। नहीं, वे ही मेरे साहस की प्रशंसा करेंगे। धीरे धीरे दूसरे व्यक्ति भी मेरे उदाहरण से शिक्षा लेंगे। अब तक हमारा प्यारा गांव निरक्षरों का गांव कहा जाता है, यह हम लोगों के लिए बड़े अपमान की बात है। जैसे भी हो, हमें इस अपमान को हटाना होगा। मैं अपने अन्य बन्धुजनों से इस विषय की खूब

चर्चा करूँगा, और उन्हें भी पढ़ना सीखने के लिए उत्साहित करूँगा। हमें अपने गांव का अभिमान है। हम इसे निरक्षर गाँव नहीं रहने देंगे। हमारे होते हमारा प्यारा गांव दूसरों की दृष्टि में असभ्य और अशिक्षित माना जाय, इससे बढ़कर हमारे लिए कलंक की बात और क्या होगी? हमारे जन्म के समय यह गांव जैसा अज्ञानमय था, यदि हमारे मरते समय भी वैसा ही मूर्ख बना रहा तो हमारे इस जीवन का लाभ ही क्या हुआ? इस गांव का सुधार कोई बाहर से आकर कर देगा, यह धारणा ही ग़लत है। हम किसी के भरोसे क्यों बैठे रहें। गाँव हमारा है, इसकी अवनति का दोष हम पर है। इसका सुधार करना हमारा काम है, और हम इसे करके रहेंगे। तभी तो हमारा इस गाँव को अपना गांव कहना सार्थक होगा। सच्चा प्रेम वही है जो सुधार और विकास में सहायक हो। मुझे जैसे अपना शरीर प्यारा है, वैसे ही गांव भी प्यारा है, उसका सुधार और उन्नति में जी-जान से करूँगा। ❀

नोट—गाँव के सब निवासियों को इसी प्रकार के विचार रखने चाहिएँ। नगर निवासियों को अपने-अपने नगर के प्रति इसी तरह की भावना रखते हुए नगरोन्नति के लिए अपना कर्तव्य पालन करते रहना चाहिए।

परिशिष्ट —२

नागरिकता की कसौटी

प्रिय विद्यार्थियो! तुम आज दिन स्कूलों में बेंचों पर बैठकर शिक्षा प्राप्त कर रहे हो। शीघ्र ही वह समय आनेवाला है, जब राज्य के उत्तरदायी पदों पर विराजमान होकर तुम्हें देश-सुधार सम्बन्धी विविध समस्याओं पर विचार करना होगा, और अनेक रचनात्मक कार्यों में भाग लेना होगा। राष्ट्र के भावी सूत्रधार तुम्हीं हो। अपने ऊपर आने वाले इस महान् उत्तरदायित्व का विचार करते हुए तुम्हें सुयोग्य नागरिक बनने का प्रयत्न करना चाहिए।

जिस प्रकार हम जन्म से तो मनुष्य हैं परन्तु वास्तव में मनुष्य कहलाने के लिए हमें मनुष्य के कार्य करने चाहिएँ, मानवी गुणों को प्राप्त करना चाहिए। इसी प्रकार यद्यपि हम जन्म से ही भारतीय नागरिक है, हमें अपने कार्यों और व्यवहार से यह दर्शाना चाहिए कि हम नागरिक कहेजाने के वास्तव में योग्य और अधिकारी हैं। विद्यार्थियों को स्मरण रखना चाहिए कि कुछ नागरिक कार्य तो ऐसे हैं, कि उनके करसकने की योग्यता क्रमशः और कुछ काल पश्चात् प्राप्त होगी। परन्तु कितनी ही बातें तो हम अपने

विद्यार्थी-जीवन में भी कर सकते हैं। हम कोई कार्य ऐसा न करें, जिससे हमारे सहपाठियों, अध्यापकों या शिक्षाधिकारियों आदि को असुविधा या हानि हो। हम दूसरों से सहानुभूति और सहयोग का भाव रखें, अपने स्वार्थ, बेपरवाही या आरामतलबी से किसी के लिए कष्टदायक न बनें। हम अपनी बात के पक्के हों, और व्यवहार के खरे हों। हम अपनी क्लास और स्कूल के अंग हैं, हमें इसका उचित अभिमान करना चाहिए और उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हमें उनके सम्बन्ध में ऐसा लोकमत बनाने में सहायक न होना चाहिए कि अमुक क्लास के लड़के बड़े खराब हैं, या यह स्कूल बहुत रद्दी है। हमने इन्हें जिस रूप में पाया उससे हम इन्हें अच्छी दशा में छोड़ने के लिए कटिबद्ध हों।

भारतवर्ष अपने भावी उत्थान के लिए युवकों तथा विद्यार्थियों की ओर निहार रहा है। यदि वे इस समय अपना अच्छा परिचय दे रहे हैं; तो देश का भविष्य निस्सन्देह उज्वल है। वह सब विघ्न-बाधाओं को दूर करके आनेवाले संसार में यथेष्ट स्थान ग्रहण करेगा। इसलिए हमें रोज़मर्रा के व्यवहार में नागरिकता के भावों का परिचय देना चाहिए।

एक विद्वान ने नागरिकता के भावों की परीक्षा करने के लिए नीचे लिखी प्रश्नावली तैयार की है। प्रत्येक प्रश्न के तीन रूप हैं:—क, ख और ग। क के अनुसार कार्य करने के लिए दस अंक रखे गये हैं, ख और ग के अनुसार कार्य करने के लिए क्रमश ५ और ० अंक हैं। इस प्रकार जो व्यक्ति सब प्रश्नों के क रूप में सूचित

भाव के अनुसार काम करें, वे १०० अंक के अधिकारी माने जाते हैं। यह नागरिक योग्यता की अधिकतम सीमा है।

प्रश्नावली

१—(क) क्या आप नियत समय पर लोगों से मिलने के विषय में तत्पर रहते हैं? या

(ख) आप कभी-कभी देर भी कर देते हैं? या

(ग) आप मिलने के लिए आनेवाले लोगों को हमेशा रोक रखते हैं?

२—(क) दूसरों को वचन देने में और उसका पालन करने में आप हमेशा सतर्क रहते हैं? या

(ख) यूंही दिया हुआ वचन भूल जाते हैं। या

(ग) वचन देना और उसे पूरा न करना आपकी आदत ही हो गई है?

३—(क) आपके मातहत काम करनेवाले नौकर, कर्मचारी आदि के साथ आपका बर्ताव सहानुभूति तथा सौजन्यतापूर्ण होता है? या

(ख) आपकी यह राय है कि इनका काम है सो करते रहते हैं? या

(ग) इन लोगों की मुसीबतों वगैरह के बारे में आप उदासीन रहते हैं।

४—(क) आपके पास आनेवाले बिलों को आप तुरन्त चुका देते हैं? या

(ख) कभी-कभी आपके बिल महीनों तक पड़े ही रह जाते हैं? या

(ग) आपका तरीका ही यह बन गया है कि बिल आये और पड़े रहें ?

५—(क) क्या आप अपने समाज में लोकप्रिय हैं ? या

(ख) आपके आस-पास ऐसे व्यक्ति भी हैं जो आपसे अधिक लोकप्रिय हैं ? या

(ग) आपकी पहिचान के लोग भी आपको टालने की कोशिश करते हैं ?

६—(क) छोटे बच्चे आपके पास खुश रहते हैं ? या

(ख) बच्चों की इच्छा न हो, तो भी आप उन्हें काफी देर तक बहला सकते हैं ? या

(ग) बच्चों के बीच आपका जी घबराता है ?

७—(क) क्या आपका यह मत है कि प्रत्येक व्यक्ति को सार्वजनिक सफ़ाई की ओर ध्यान देना चाहिए ? या

(ख) आप भी राह चलते कागजों के टुकड़े सड़कों पर फेंक दिया करते हैं ? या

(ग) आपकी यह राय है कि सार्वजनिक स्वच्छता फ़जूल सी चीज़ है ?

८—(क) व्यक्तिगत रहन-सहन और धर्म भावनाओं के बारे में पड़ोसियों का दिल न दुखाने की आप सदा कोशिश करते हैं। या

(ख) आपके विचार में पड़ोसियों की भावनाओं को जानने की झंझट में पड़ना व्यर्थ है ? या

(ग) आपकी इच्छा रहती है कि दूसरों की राय के बारे में लापरवाही दिखायें ?

९—(क) कल्पना करो कि आपको दस रुपये का एक नोट मिल जाये। क्या आप यह पता लगाने की खूब कोशिश करेंगे कि नोट किसका है ? या

(ख) अगर वह आदमी पता लगाते आये और कहे कि नोट मेरा है तो आप उसे लौटा देंगे ? या

(ग) 'चलकर आई हुई लक्ष्मी' को लौटाना आपको पसन्द नहीं है ?

१०—(क) क्या आप नियमित रूप से समय पर अपना चन्दा सार्वजनिक संस्थाओं को दे देते हैं ? या

(ख) कभी कभी मदद कर दिया करते हैं ? या

(ग) ऐसे खर्चों से आपको नफ़रत है ?

पाठको को प्रति सप्ताह इन प्रश्नों के आधार पर अपनी नागरिकता की भावना की जांच करते रहना चाहिए। इससे वे अपनी प्रगति का अनुमान कर सकते हैं। जो पाठक चाहें, वे अपनी परिस्थिति तथा अपने गुरुजनों के परामर्श के अनुसार, प्रश्नावली को बदल लें; परन्तु परीक्षा में कड़ाई से काम लेना चाहिए, अंक देने में रियायत न करनी चाहिए; यदि आरम्भ में अच्छे अंक प्राप्त न हों, परीक्षा में फेल हो जायें तो कोई घबराने की बात नहीं है; आगे और अधिक उत्साही और कर्तव्य-परायण होना चाहिए।